प्रतिवेद्य

भारत का सर्वोच्च न्यायालय

सिविल अपील अधिकारिता

सिविल अपील सं. 3498 वर्ष 2020

विशेष अनुमति याचिका (सिविल) सं. 5136 वर्ष 2020 से उद्भूत

उत्तर प्रदेश राज्य ...अपीलार्थी

बनाम

सुधीर कुमार सिंह और अन्य ...प्रत्यर्थी

साथ में

सिविल अपील सं. 3499 वर्ष 2020

विशेष अनुमति याचिका (सिविल) सं. 7351 वर्ष 2020 से उद्भूत

और

सिविल अपील सं. 3500 वर्ष 2020

विशेष अनुमति याचिका (सिविल) सं. 7364 वर्ष 2020 से उद्भूत

नि र्ण य

माननीय न्यायमूर्ति आर.एफ. नरीमन

1. अनुमति अनुदत्त।

2. उत्तर प्रदेश राज्य भंडारण निगम ("निगम") द्वारा दिनांक 06.01.2018 को रेलवे वैगनों, ट्रकों आदि से/में खाद्यान्न/उर्वरक बैग उतारने/लोड करने, खाद्यान्न/उर्वरकों को बैग में भरने, बोरी में भरने, तौलना, मानकीकरण, खाद्यान्न/उर्वरकों की सफाई इत्यादि और खाद्यान्न/उर्वरक इत्यादि का रेलवे स्टेशन से निगम के गोदामों तक अथवा निगम गोदामों से रेलवे स्टेशन तक परिवहन अथवा विंध्याचल (मिर्जापुर) क्षेत्र में किसी भी स्थान से किसी अन्य स्थान पर परिवहन करने के लिए एक ई–टेंडर नोटिस जारी किया गया। दस दिन बाद दिनांक 16.01.2018 को निगम द्वारा "प्रशासनिक कारणों" के कारण उक्त निविदा रद्द कर दी गई। दिनांक 01. 04. 2018 को, पुनः उसी शर्तों के साथ एक ई–टेंडर नोटिश जारी किया गया और जहां तक विंध्याचल (मिर्जापुर) क्षेत्र का संबंध है,

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

यह 'एफ.सी.आई. और कथित सामग्री आदि में खाद्य अनाज के देखभाल और परिवहन ठेकेदार की नियुक्ति' के लिए था जो उत्तर प्रदेश के निम्नलिखित डिपो/केंद्रों के लिए दो वर्षों के लिए थाः

क्रम सं.	डिपो/केंद्र का नाम	कार्यशील क्षमता (एम.टी. में)	संविदा का अनुमानित वार्षिक मूल्य	आर.टी.जी.एस./ एन.ई एफ टी के माध्यम से 20% सुरक्षा राशि की कमाई	सुरक्षा जमा (रुपये में)
1	मिर्जापुर	8430	50000000.00	10000.00	500000.00
2.	भवानीपुर पीईजी–1	30000.00	60000000.00	1200000.00	6000000.00
3.	भवानीपुर पीईजी–2	10000	10000000.00	200000.00	1000000.00
4.	तेंदू (सोनभद्र)	61400	9000000.00	180000.00	900000.00

3. इन चार केंद्रों के लिए तकनीकी बोलियां 17.04.2018 को शुरु हुईं। तब तकनीकी रूप से योग्य बोली लगाने वाले का मूल्य दिनांक 23.04.2018 को शुरू हुआ। अब तक प्राप्त मूल्य बोलियां, जहां तक इन चार केंद्रों का संबंध था, इस प्रकार थेः

"PEG भवानीपुर–I केंद्र"

क्रम सं.	बोलीदार	दर
1.	माँ भवानी ट्रांसपोर्ट	222% ए.एस.ओ.आर.
2.	इकबाल अहमद अंसारी	154% ए.एस.ओ.आर.
3.	सुरेश सिंह	174% ए.एस.ओ.आर.

पीईजी भवानीपुर–II केंद्र

क्रम सं.	बोलीदार	दर

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

1.	मोहम्मद इकबाल अंसारी	198% ए.एस.ओ.आर.
2.	इकबाल अहमद अंसारी	153% ए.एस.ओ.आर.
3.	सुरेश सिंह	174% ए.एस.ओ.आर.

मिर्जापुर केंद्र

क्रम सं.	बोलीदार	दर
1.	मां भवानी ट्रांसपोर्ट	219% ए.एस.ओ.आर
2.	इकबाल अहमद अंसारी	139% ए.एस.ओ.आर
3.	सुरेश सिंह	134% ए.एस.ओ.आर
4.	शकील अहमद	248% ए.एस.ओ.आर

तेंदू (सोनभद्र) केंद्र

क्रम सं.	बोलीदार	दर
1.	मां भवानी ट्रांसपोर्ट	180% ए.एस.ओ.आर
2.	धर्मराज सिंह	300% ए.एस.ओ.आर
3.	सोनभद्र ट्रांसपोर्ट	शब्दों एवं अंकों में विनिर्दिष्ट नहीं
4.	मनीषा इंजीनिरिंग	225% ए.एस.ओ.आर
5.	अर्जुन सिंह	25% ए.एस.ओ.आर

(जहां ए.एस.ओ.आर. का अर्थ है दरों की अनुसूची से ऊपर)"

4. तब दिनांक 04. 05. 2018 को निगम के तत्कालीन प्रबंध निदेशक ने स्पष्ट रूप से इस आधार पर उपरोक्त निविदा को रद्द कर दिया कि इस तरह के निविदा के साथ आगे बढ़ना 'अव्यावहारिक' है। फलस्वरूप दिनांक 01.06.2018 को, उसी क्षेत्र के लिए, अनुबंध की समान कार्य क्षमता और अनुमानित वार्षिक मूल्य के लिए पूर्वोक्त निविदा को पुनः जारी किया गया। यह कहा जा सकता है कि इनमें से प्रत्येक निविदा दो साल की अवधि के लिए थी।

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

3 5. सुधीर कुमार सिंह, 2020 के एस.एल.पी. (सी) नंबर 5136 और 2020 के एसएलपी (सी) नंबर 7351 से उत्पन्न अपीलों में प्रतिवादी नंबर 1 को भवानीपुर–I केंद्र के लिए सफल बोलीदाता घोषित किया गया था, 341% ASOR की दर से, मिर्जापुर, भवानीपुर–II और तेंदू (सोनभद्र) के लिए अन्य सफल निविदाकार क्रमशः 314%, 338% और 290% ASOR हैं। दिनांक 13. 07. 2018 को, निविदा के तहत कार्य के निष्पादन के लिए निगम और प्रत्यर्थी सं.1 के बीच एक संविदा हुई जो उस दिन से शुरू हुआ और एक वर्ष से अधिक की अवधि तक चलता रहा। 6. इसी बीच, दिनांक 27.05.2019 को, पूर्वांचल ट्रक मालिक संघ के श्री प्रमोद कुमार सिंह द्वारा को ई–टेंडर नोटिस दिनांकित 01.06.2018 को जारी करने में हुई वित्तीय अनियमितताओं के संबंध में उ.प्र. राज्य के प्रधान सचिव को दो शिकायतें की गईं। तब सचिव, उ.प्र. राज्य प्रधान ने इन शिकायतों को दिनांकित 30.05.2019 पत्र द्वारा निगम के प्रबंध निदेशक को प्रेषित कर दिया। जहां तक प्रत्यर्थी सं.1 का संबंध है उक्त पत्र इस प्रकार हैः

श्री प्रमोद कुमार सिंह को ट्रक ओनर्स एसोसिएशन की दिनांकित 27.05.2019 की दो संलग्न शिकायतों का विश्लेषण करना चाहिए, जिसमें विंध्यांचल डिवीजन में हैंडलिंग और ट्रांसपोर्ट संविदा में होने वाली गंभीर वित्तीय अनियमितताओं के कारण निगम को हुए करोड़ों का नुकसान दिखाया गया है।

xxx xxx xxx

विंध्यांचल डिवीजन में दिनांक 16. 04. 2018 को निविदा की गई थी, जिसमें निविदाओं की कम दर प्राप्त हुई थी। जारी निविदाएं दिनांक 05.05.2018 को बिना किसी कारण के रद्द कर दी जाती हैं और दिनांक 16.06.2018 को रद्द किए गए केंद्रों की निविदा का पुनः निविदा दिया गया, जिसमें पुरानी की तुलना में नई निविदाओं में दरें बहुत अधिक हैं और उच्च दरों पर काम आवंटित करके काम किया जा रहा है। कृपया पूर्वोक्त के संबंध में और संलग्न पत्रों में उल्लिखित सभी बिंदुओं के संबंध में पांच दिनों के भीतर रिपोर्ट प्रदान करने का आश्वासन दें।

7. इस पत्र के परिणामस्वरूप, निगम के प्रबंध निदेशक ने इस मामले में एक पूर्व पक्षीय जांच की, और उत्तरदाता नंबर 1 का संबंध था, प्रबंध निदेशक पिछले निविदा दिनांक 01.04.2018 को रद्द करने में गया, और पहले इन चार केंद्रों के लिए प्राप्त दरों के

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

तुलनात्मक विवरण में, दिनांक 01.06.2018 की समान निविदा मात्रा की दरों की तुलना में, और बाद की दरें बेहद अधिक पाई गईं। दिनांकित 14. 06. 2019 की अपनी रिपोर्ट में उन्होंने अंततः निष्कर्ष निकालाः

यह उल्लेखनीय है कि ई–टेंडरिंग प्रक्रिया को विज्ञापन संख्या 1.1001.23318 दिनांकित 01.04.2018 के माध्यम से इस आधार पर रद्द कर दिया गया कि प्राप्त न्यूनतम दरें अव्यावहारिक हैं, किसी भी परिस्थिति

में स्वीकार्य नहीं है। इस संबंध में, ई–टेंडरिंग प्रक्रिया प्राप्त करने के लिए डिवीजन स्तर पर गठित समिति ने पीईजी तेंडू (सोनभद्र) केंद्र को केवल अव्यावहारिक माना, जबकि प्रधान कार्यालय ने इसे स्वीकार कर लिया क्योंकि यह सभी केंद्रों के संबंध में है। जहां तक उदय कंस्ट्रक्शन द्वारा सिक्योरिटी डिपॉजिट को जब्त करने या उसी के उत्पादन के लिए दायर किए गए आवेदन के संबंध में तथ्य छिपाने का सवाल है, तो इस संबंध में यह जाना जाना चाहिए कि उदय कंस्ट्रक्शन ने विज्ञापन संख्या 1.1001.23318 के माध्यम से केवल PEG तेंदू के लिए आवेदन किया था। दिनांक 01.04.2018। इसलिए, इस आधार पर अन्य केंद्रों के लिए प्राप्त बोलियों की अस्वीकृति उचित नहीं थी।"

8. इस बीच, आयुक्त, विंध्याचल मंडल, मिर्जापुर ने भी एकपक्षीय जांच की और दिनांक 29.06.2019 को अपनी रिपोर्ट में निम्नलिलिखित निष्कर्ष निकालाः

1. राज्य क्षेत्रीय प्रबंधक श्री मधुकर गुप्ता ने राज्य महाप्रबंधक (वित्त) उत्तर प्रदेश राज्य भण्डारण निगम को अग्रेषित अपने पत्र सं. आर.बीएच.एन/दिनांकित 26–05–2018 में उल्लेख किया है कि ई–टेंडरिंग समिति का गठन केवल औपचारिकताओं के उद्देश्य के लिए किया गया है। यह पैराग्राफ की जांच करने से स्पष्ट है कि निविदा में औपचारिकता की गई है। दिनांक 12–07–2018 को राज्य प्रबंधक ने स्वीकृति का अनुमोदन किया और दिनांक 13–07–2018 को उत्तर प्रदेश राज्य भंडारण निगम ने स्वीकृति प्रदान की। दिनांक 13–07–2018 को श्री मधुकर गुप्ता राज्य क्षेत्रीय प्रबंधक, उत्तर प्रदेश राज्य भण्डारण निगम, विंध्याचल ने संबंधित ठेकेदारों को नियुक्ति आदेश प्रदान किया। इसके जरिए सम्पूर्ण प्रक्रिया में असामान्य सतर्कता दिखाई गई है।

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

2. क्षेत्रीय प्रबंधक, उत्तर प्रदेश राज्य भंडारण निगम के कंप्यूटर सलाहकार श्री अनुज शुक्ला को श्री मधुकर गुप्ता द्वारा शामिल कराया गया जो उचित नहीं है। निविदा कार्य में संविदात्मक कार्य को ध्यान में रखते हुए आपत्तिजनक है।

3. केवल पंजीकृत ठेकेदारों को भाग लेने के लिए शर्त रखी गई थी जो आपत्तिजनक है। केवल पंजीकृत ठेकेदार की भागीदारी के कारण, ठेकेदारों के बीच कोई प्रतियोगिता नहीं हुई। जिसके कारण कई गुना उच्च दर प्राप्त की गई थी। जिसके जरिए विभाग को नुकसान हुआ।

4. क्षेत्रीय प्रबंधक ने अपने पत्र सं. आर.बी.एन./284/दिनांकित 12–07–2018 के माध्यम से प्रबंध निदेशक उत्तर प्रदेश राज्य भंडारण निगम लखनऊ को संबोधित किया। निर्धारित दर के लिए 314 प्रतिशत, 341 प्रतिशत, 338 प्रतिशत और 290 प्रतिशत उच्च दर पर नियमित ठेकेदारों की नियुक्ति की सिफारिश की पुष्टि का कार्य भारतीय उर्वरक निगम हैंडलिंग और परिवहन को दे दिया गया है। यह उल्लेख किया गया है कि तय दर से उच्च दर के बाबजूद क्षेत्रीय प्रबंधक ने उच्च दर के बारे में न तो कोई बाजार सर्वे किया गया और न ही उन्होंने अपने पत्र में उल्लेख किया और उन्होंने गैर –जिम्मेदार तरीके से स्वीकृति की सिफारिश कर दी। अतः श्री मधुकर गुप्ता, राज्य क्षेत्रीय प्रबंधक ने अपने कर्तव्य और जिम्मेदारी का पालन नहीं किया है और वह बिना किसी कारण के उच्च दर तय करने और स्वीकार करने के लिए जिम्मेदार है।5. निगम मुख्यालय को भी निर्धारित दर से उच्च दर के संबंध में कार्रवाई करने के लिए उपयुक्त नहीं माना गया। मुख्यालय द्वारा जो जांच की गई थी, वह पूरी नहीं की गयी है। 6. इस संबंध में स्पष्ट रूप से वित्तीय नुकसान का निर्धारण करना संभव नहीं है क्योंकि न तो इस मामले में, भाग लेने का अवसर दिया गया है और न ही बाजार का सर्वे किया गया है।उस औपचारिकता के आधार पर दर निर्धारित की जा सकती है। निश्चित रूप से नुकसान हुआ है। लेकिन इसे बताया नहीं जा सकता है। अभिलेख को परिशीलन और आवश्यक कार्रवाई हेतु भेजा गया है।"

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

9. प्रस्तुत इन दोनों रिपोर्टों में विशेष सचिव, उ.प्र. सरकार ने प्रबंध निदेशक को एक पत्र दिनांकित 16.07.2019 लिखा, जिसमें प्रबंध निदेशक की रिपोर्ट दिनांकित 14.06.2019 को संदर्भित देकर निष्कर्ष निकाला गयाः

इसमें क्षेत्रीय स्तर के अधिकारी (विंध्याचल डिवीजन) और उच्च दर स्वीकृति देने वाले अधिकारी और तत्कालीन प्रबंध निदेशक और मुख्यालय से संबंधित अधिकारियों की भूमिका भी संदिग्ध प्रतीत होती है।इसलिए, मुझे यह कहने का निर्देश दिया गया है कि आप अपने स्तर पर मामले की जांच करके, सरकार को हुए वित्तीय नुकसान और उसका मूल्यांकन करने के बाद, संबंधित ठेकेदार और संबंधित अधिकारियों से उक्त राशि की वसूली के लिए कार्रवाई करेंगे। जिन अधिकारियों/कर्मचारियों के खिलाफ कोई पूर्व विभागीय कार्यवाही लंबित है, उनके संबंध में इन आरोपों को अतिरिक्त चार्जशीट के रूप में शामिल करके कार्रवाई की जाएगी और उन अधिकारियों/कर्मचारियों के खिलाफ दोषी पाया जाएगा जिनके खिलाफ कोई कार्यवाही लंबित नहीं है, उन्हें चिह्नित करके कार्यवाही की जाएगी । उपरोक्त उल्लिखित फर्मों को प्रदान की गयी नियम विरूद्ध निविदाओं को रद्द कर संबंधित गोदामों के संचालन और परिवहन कार्य के लिए फिर से ई –टेंडरिंग के माध्यम से ठेकेदारों की नियुक्ति की जाएगी। जल्द से जल्द उक्त कार्यवाही कर सरकार को सूचित किया जाए।"

10. इस पत्र के अनुसरण में, उपरोक्त निविदाएं दिनांक 26.07.2019 को रद्द कर निगम के कुछ कर्मचारियों के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही की गई। इन कार्यवाहियों के कारण दिनांक 18.10.2019 की एक रिपोर्ट आई, जिसमें पूर्व दरों और वर्तमान दरों के बीच अंतर पाया गया, और यह पाया गया कि पूर्व में मंजूर राशि के सापेक्ष कुल 4,40,05,369 से अधिक भुगतान किया गया–यह राशि के चलते निगम को वित्तीय नुकसान है।

11. इस बीच, प्रत्यर्थी–1 ने इलाहाबाद में उच्च न्यायालय के समक्ष जुलाई 2019 में रिट याचिका सं. 25389 वर्ष 2019 दायर किया, जिसमें उन्होंने दो वर्षों की अवधि में से एक वर्ष सफलतापूर्वक बिता लेने के उपरान्त निगम के साथ की गयी संविदा को 'अवैध और मनमानीपूर्ण तरीके से' समाप्त कर दिया है उसको चुनौती दिया है, और दिनांकित

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

01.06.2018 की निविदा को रद्द करने वाला निगम का आदेश दिनांकित 26.07.2019 अपास्त करने के लिए करने के लिए प्रार्थना की।

12. उच्च न्यायालय ने इस रिट याचिका में पारित निर्णय दिनांकित 11.12.2019 रिट, जो एस.एल.पी. (सिविल) सं. 5136 वर्ष 2020 के एस.एल.पी. (सिविल) सं. 7351 वर्ष 2020 से उत्पन्न अपीलों में आक्षेपित है, रिट याचिका में की गयी प्रार्थना को निर्धारित करने के बाद अपने समक्ष उत्पन्न चार प्रश्न निर्धारित किए जो इस प्रकार हैंः (क) क्या दो जांच रिपोर्ट प्रक्रियात्मक रूप से दोषपूर्ण हैं क्योंकि इसके तहत दिए गए निष्कर्ष तथ्य पर आधारित नहीं है और इसलिए विकृत हैं।

(बी) क्या प्रतिवादी प्रबंध निदेशक को एक वर्ष की अवधि के बीत जाने बिना सूचना दिये याचिकाकर्ता के साथ लिखित संविदा को रद्द करने में उचित था।
(ग) क्या निगम,एक स्वायत्त निकाय, को विशेष तरीके से कार्रवाई करने के लिए निर्देशित नहीं किया जा सकता था और क्या प्रबंध निदेशक विशेष सचिव के कार्यकारी पद के तहत संविदा को रद्द करने में सहीं नहीं था।
(घ) क्या प्रबंध निदेशक द्वारा पारित आदेश पक्षपात के आधार पर दूषित है क्योंकि वह स्वयं जांच अधिकारी था और याचिकाकर्ता को अपने बचाव करने का अवसर दिये बिना उसने स्वयं जांच की और फिर उसके द्वारा तैयार रिपोर्ट के आधार पर, उसने संविदा को रद्द कर दिया।'
13. उच्च न्यायालय ने निष्कर्ष निकाला कि चूंकि सम्पूर्ण कार्यवाही प्रत्यर्थ –1 की पीठ के पीछे करायी गई थी, और इस बात पर विचार कर कि दिनांक 01.06.2018 को निविदा सूचना को किसी ने भी न्यायालय में चुनौती नहीं दिया था, इसलिए प्राप्त शिकायतों का एक एकपक्षीय मूल्यांकन निगम के प्रबंध निदेशक और विद्वान आयुक्त द्वारा जल्दबाजी में किया गया था, जो कई आधारों पर अपास्त किये जाने योग्य था, उनमें से एक महत्वपूर्ण– जहां तक प्रत्यर्थी–1 का संबंध है– इस कार्यवाही में नैसर्गिक न्याय के सिद्वान्त का पालन नहीं किया गया है। इसलिए, उच्च न्यायालय ने अभिनिर्णीत कियाः

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

यदि अधिकारियों ने स्वविवेकानुसार पूर्व टेंडर नोटिस को रद्द कर दिया होता और उन टेंडर नोटिस को रद्द करने पर कभी सवाल नहीं उठाया गया होता, केवल इसलिए कि उन पूर्व टेंडर नोटिसों को रद्द या वापस ले लिया गया था तब यह उपधारणा नहीं की जा सकता है कि तीसरा नोटिस जिसमें निविदा आमंत्रित किया गया था वह कुछ वाह्य प्रतिफल के लिए था। यह सच है कि इस बार की कीमतों को निविदा की प्रक्रिया में पूर्व की तुलना में बहुत अधिक रखा गया था जिसमें कीमतों को बहुत कम उद्धृत किया गया था किन्तु इस आधार पर पूरी निविदा को रद्द नहीं किया जा सकता है और इसको न केवल अंतिम रूप दिया गया बल्कि संविदा भी कर ली गयी थी और संविदा के पक्षकार भारी निवेश कर काम कर रहे थे।

अगर यह उस तरह का भी मामला होता, जहां संविदा के पक्षकार नियमों और शर्तों का उल्लंघन किये होते तब यह कहा जा सकता था कि निविदा रद्द किये जाने योग्य है क्योंकि संविदा के नियमों और शर्तों के उल्लंघन किया गया है। लेकिन प्रस्तुत मामले में ऐसा कोई भी निष्कर्ष निकाला गया है। वे कारण जिनकी वजह से निविदा प्रक्रिया, जो पहले ही संविदा के निष्पादन से पूरी की जा चुकी थी, संविदा प्राप्त करने में याची द्वारा गलत तरीका अपनाये जाने का कारण दिये बिना निरस्त कर दी गयी है। इस प्रकार याचिकाकर्ता को इस मामले में गलत नहीं ठहराया जा सकता है और इसलिए, हम गहराई से विचार कर मानते हैं कि यदि याचिकाकर्ता पहले से ही करार के तहत काम कर रहा था और उसके ऊपर करार के नियमों और शर्तों का उल्लंघन करने का कोई आरोप नहीं था तब प्रत्यर्थी करार को एकपक्षीय रद्द करने सही नहीं थे।

xxx xxx xxx

यह पता नहीं चला है कि निविदा आमंत्रित करने वाले नोटिस के खिलाफ आवेदन प्रस्तुत करने के चरण में, याचिकाकर्ता पात्र नहीं था या तकनीकी बोली और वित्तीय बोली खोलने के समय याचिकाकर्ता गलत तरीके से योग्य हो गया था और वित्तीय बोली याचिकाकर्ता को गलत तरीके से अनुमोदित किया गया था और याचिकाकर्ता और निगम के बीच समझौता कानून के खिलाफ शून्य था। यदि उपरोक्त सभी तीन चरणों में याचिकाकर्ता को किसी भी तरह से चीजों में हेरफेर करने और निगम के अधिकारियों के

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

साथ मिलकर किसी भी साजिश को रच कर निविदा प्राप्त करने के लिए दोषी नहीं ठहराया जा सकता है, तो प्रबंध निदेशक द्वारा अचानक समझौते को रद्द कर दिया गया है। संपूर्ण नोटिस आमंत्रित निविदा खराब थी, निश्चित रूप से इस तरह के आदेश को पारित करने से पहले याचिकाकर्ता को सुनवाई के अवसर और सुनवाई के अवसर की आवश्यकता थी। यह सुस्थापित विधि है कि प्रशासनिक शक्ति के प्रयोग में शक्ति का प्रयोग करने वाला प्राधिकारी न केवल अपने विवेक का सम्यक रूप से प्रयोग करे बल्कि उन प्रक्रियाओं का भी पालन करे जिससे कार्यवाही मनमानापूर्ण न बन जाए। यह सुस्थापित विधित सिद्धान्त है कि जो भी मनमानापूर्ण है, वह भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 द्वारा बाधित होता है और वर्तमान मामले में हम पाते हैं कि प्रत्यर्थियों आक्षेपित कार्रवाई प्रत्यर्थियों ने जिन प्रक्रिया का पालन किया वह न केवल पूर्णरूपेण एकपक्षीय है बल्कि सरकार के विशेष सचिव के कार्यकारी व्यवस्थापत्र है जिसको अनसुना कर दिया गया था।'

14. इस प्रकार न्यायालय ने सुनकर निम्नलिकित निष्कर्ष निकालाः आदेश दिया गया मूल रूप से प्रबंध निदेशक द्वारा तैयार की गई जांच रिपोर्ट पर आधारित है और यह कि जांच पूर्व पक्षीय तरीके से आयोजित की गई थी और प्रबंध निदेशक आदेश पारित करने से पहले याचिकाकर्ता को सुनवाई का कोई अवसर प्रदान करने में विफल रहा, जिसका प्रभाव है बिना किसी उचित कारण के समझौते को समाप्त करने का प्रभाव यह मानने के लिए कि याचिकाकर्ता किसी भी समय गलती पर था। इसलिए, प्रबंध निदेशक की तरफ से इन परिस्थितियों में पूर्वाग्रह के तत्व को खारिज नहीं किया जा सकता है। इसलिए, दिनांकित 26.7.2019 के करार को समाप्त करने वाला आदेश कानून में पोषणीय नहीं है। इस प्रकार, पूर्वगामी चर्चा के कारण रिट याचिका सफल हो जाती है और अनुज्ञात जाती है। रिट याचिका में किया गया आदेश दिनांकित 26.7.2019 (संलग्नक–13) और प्रबंध निदेशक द्वारा प्रस्तुत दिनांकित 14.6.2019 की जांच रिपोर्ट के साथ–साथ विशेष सचिव द्वारा दिनांक 16.7.2019 द्वारा पारित आदेश को भी रद्द कर दिया गया है। यदि आक्षेपित आदेश के अनुसरण में कोई कार्यवाही की गयी है तो वह भी रद्द की जाती है। तथापि, खर्चे संबंधी कोई कोई आदेश नहीं दिया जाएगा।

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

15. डॉ. अभिषेक मनु सिंघवी, निगम की ओर से उपस्थित वरिष्ठ अधिवक्ता, ने पहली बार प्रतिवादी–1 द्वारा दायर रिट याचिका में प्रार्थना का जवाब देकर न्यायालय के समक्ष यह तर्क दिया कि उच्च न्यायालय उससे परे चला गया जिस चीज की मांग की गयी थी। उनके अनुसार, रिट याचिका में केवल द्वितीय निविदा दिनांकित 26.07.2019 के आदेश को रद्द करने की प्रार्थना किया गया। उच्च न्यायालय इस सब से परे जाकर न केवल पूर्वोक्त निरसन आदेश को रद्द कर दिया, बल्कि प्रबंध निदेशक की जांच रिपोर्ट दिनांकित 14.06.2019 साथ ही विशेष सचिव के आदेश दिनांकित 16.07.2019 को रद्द कर दिया और इसके परिणामस्वरूप जो कार्रवाही की गयी अर्थात गैरजिम्मेदार अधिकारियों के विरूद्ध विभागीय कार्यवाही इस रिट याचिका में चुनौती का विषयवस्तु कभी नहीं रहा। उन्होंने तर्क दिया कि पहले की निविदा दिनांक 01.04.2018 में प्राप्त दरों और दिनांक 01.06.2018 की निविदा में तय दर जन्हें रद्द कर दिया गया था उनके बीच तुलना के आधार पर, यह स्पष्ट करने के लिए असमानता इतनी ज्यादा थी कि इन चार केंद्रों के लिए इन्न दरों पर संविदा नहीं किया जाना चाहिए था। उन्होंने तर्क दिया कि उच्च न्यायालय को इन दरों पर संविदा करने देने के परिणामस्वरूप होने वाले भारी वित्तीय नुकसान की आँकलन करना चाहिए, और निविदा रद्द करने में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए, क्योंकि समान कार्यों के लिए इतनी कम अवधि में दरों में भारी वृद्धि को देखते हुए इसे मनमाना नहीं माना जा सकता था। इसके अलावा, उन्होंने तर्क दिया कि प्राकृतिक न्याय पर मामले के कानून से पता चला है कि यह एक अनम्य स्ट्रैटजैकेट नहीं था, लेकिन इसका उपयोग समझदारी और अच्छी तरह से किया जाना था, और इस प्रस्ताव के लिए इस न्यायालय के कई निर्णयों का हवाला दिया गया था कि भले ही प्राकृतिक न्याय का उल्लंघन किया जा सकता है किसी दिए गए मामले के तथ्य, यदि अन्यथा इस तरह के उल्लंघन के परिणामस्वरूप 12 पूर्वाग्रह नहीं होते हैं, तो यह आदेश को अलग करने और प्रभावित पक्ष को सुनने के बाद एक आदेश पारित करने के लिए अधिकारियों को रिमांड देने के लिए निरर्थकता में एक मात्र अभ्यास होगा। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि जैसा कि आज की तिथि पर संविदा की दो साल की अवधि समाप्त हो गई है, और यह वास्तविक ठेकेदार, यानी प्रत्यर्थी–1, दिनांक 21.03.2020 को दरों (139% ए.एस.ओ.आर.) मिर्जापुर में में दिये गये उसी कार्य को कर रहा है, जो पहले के निविदा

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

दरों से बहुत कम है, जैसा कि सफल निविदाकार तिलोतमा देवी दिनांक 31.09.2019 से कर रही है और जहां तक भवानीपुर–II का संबंध है, जिसे 221% ए.एस.ओ.आर. प्रदान किया गया था। डॉ. सिंघवी ने यह भी तर्क दिया कि रिट न्यायालय को संविदात्मक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए था, और प्रत्यर्थी पर छोड़ देना चाहिए था कि वह उचित अनुतोष के लिए न्यायालय में वाद दायर करने के लिए पहुंच करे।

16. राज्य की तरफ से उपस्थित विद्वान सॉलिसिटर जनरल श्री तुषार मेहता ने तर्क दिया कि उनकी एक सीमित भूमिका है और विभागीय कार्रवाई करने के लिए विशेष सचिव के दिनांक 16.07.2019 के पत्र को अपास्त करने के लिए अपने तर्कों को सीमित कर दिया। उन्होंने तर्क दिया कि इस पत्र को उच्च न्यायालय द्वारा अपास्त नहीं किया जा सकता था, क्योंकि रिट याचिकाकर्ता द्वारा इससे पहले ऐसी कोई प्रार्थना या तर्क नहीं दिया गया था।

17. प्रत्यर्थी–1 की ओर से पेश विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री राकेश द्विवेदी ने तर्क दिया कि उच्च न्यायालय के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए, क्योंकि उनके मुवक्किल ने बहुत सारे पैसे खर्च किए थे, और एक वर्ष से अधिक की अवधि के लिए संविदा पर सफलतापूर्वक निगम की तरफ से बिना किसी शिकायत के काम किया था। उन्होंने इस तथ्य को दोहराया कि किसी ने भी अपने ग्राहक को निविदा के दिये जाने को चुनौती नहीं दिया था, और निविदा रद्दकरण अपने ग्राहक की पीठ के पीछे किया गया था।

अगर अधिकारियों ने अपने ग्राहक को सुनने की जहमत उठाई होती, तो उसका ग्राहक यह बता सकता था कि आस–पास के अन्य डिवीजनों में, लगभग समान दरों पर निविदाएं दी गई थीं, जिनमें से सभी पर काम किया गया था, और जिनमें से किसी को भी रद्द नहीं किया गया है। इस प्रकार, उन्होंने तर्क दिया कि उनका मुवक्किल गंभीर पूर्वाग्रह से पीड़ित हुआ, जिसमें वह दो वर्षों में से केवल एक वर्ष अपने संविदा पर काम करने में समर्थ हो पाया जो उसे दिया गया था। उन्होंने आगे तर्क दिया कि अगर उसे सुनवाई का अवसर दिया जाता तो उनका मुवक्किल यह भी बता पाता कि जिन दरों पर निविदा जारी की गयी थी उसे उनके पक्ष में संविदा की भयावहता को देखते हुए अनुचित नहीं माना जा

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

सकता है। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि मिर्जापुर में कम दर पर निविदा देना, जो वर्तमान में उनके ग्राहक के माध्यम से संसाधित किया जा रहा है, उस निविदा के साथ तुलना नहीं की जा सकती है जो उसके मुवक्किल को भवानीपुर–। में प्रदान की गई थी, क्योंकि, अन्य बातों के साथ, वहां पर दो संविदा में दिए गए कार्य की मात्रा के बीच बड़ा अंतर था। उन्होंने तर्क दिया कि यह कहना ठीक नहीं है कि उसके मुवक्किल के साथ कोई पूर्वाग्रह कारित नहीं हुआ है, क्योंकि उसकने संविदा पर एक वर्ष काम नहीं कर पाया है, संविदा की अवधि अब समाप्त हो रही है, और यदि उनके मुवक्किल की संविदा को अपास्त किया जाता है तो उनका मुवक्किल निगम के साथ किसी अन्य संविदा के लिए तीन साल की अवधि के लिए बोली लगाने से वंचित किया जाता है। उच्च न्यायालय के फैसले के समर्थन में उन्होंने आगे तर्क दिया कि निगम द्वारा संविदा को समाप्त करने की जो कार्रवाई की गयी वह स्वविवेक पर नहीं की गयी थी और विशुद्ध रूप से दिनांक 16.07.2019 को विशेष सचिव, उ. प्र. सरकार के निर्देश पर की गयी थी।

उन्होंने यह भी तर्क दिया कि उनका बयान दर्ज किया जा सकता है कि उनका मुवक्किल करार के पाश्विक निरस्तीकरण की अवधि के लिए नुकसान का दावा करने वाला नहीं है, और यह कि निष्पक्षता में, उनके मुवक्किल द्वारा जमा किया गया बयाना और सुरक्षा जमा को निगम द्वारा वापस कर दिया जाना चाहिए।

18. सभी पक्षकारों के लिए विद्वान अधिवक्ता को सुनने के उपरान्त एक बात स्पष्ट हो जाती है। इस तथ्य के बावजूद कि प्रत्यर्थी–1 द्वारा दायर रिट याचिका में जो प्रार्थना की गयी थी उसको आक्षेपित निर्णय की शुरुआत में द्वितीय निविदा के निरस्तीकरण को स्वयं द्वारा पुष्ट कर अपास्त कर दिया गया था, आक्षेपित निर्णय पर आगे कार्रवाही की गयी और न केवल इस तरह के निरस्तीकरण दिनांकित 26.07.2019 के पत्र के माध्यम से रद्द कर दिया, बल्कि आगे कार्यवाही कर प्रबंध निदेशक की रिपोर्ट दिनांकित 14.06.2019 की और विशेष सचिव के आदेश दिनांकित 16.07.2019 को अपास्त कर दिया गया जिसमें अनुशासनात्मक कार्रवाई को करने और जिम्मेदार लोगों से वित्तीय नुकसान की वसूली अपेक्षित थी। श्री राकेश द्विवेदी ने यह भी स्वीकार किया कि उनके मुवक्किल ने किसी भी राहत के लिए दोषी अधिकारियों से किसी भी अनुतोष की मांग नहीं की थी। ऐसा मामला

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

होने के कारण, हमने आक्षेपित निर्णय को अपास्त कर दिया क्योंकि न्यायालय ने प्रबंध निदेशक की रिपोर्ट दिनांकित 14.06.2019 और विशेष सचिव के आदेश दिनांकित 16.07.2019 को रद्द कर दिया है। इन आदेशों के अनुसरण में जो परिणामी कार्रवाही की गयी उसे विधिसम्मत होना चाहिए।

19. डॉ. सिंघवी की प्रारंभिक आपत्ति जो संविदा के विखंडन से संबंधित है कार्यवाही करने के लिए प्रत्यर्थी–1 को रिट न्यायालय न जाकर सिविल न्यायालय जाने से रोक नहीं लगा सकती है ए.बी.एल. इंटरनेशनल लिमिटेड और अन्य बनाम एक्सपोर्ट क्रेडिट गारंटी कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड और अन्य (2004) 3 एस.सी.सी. 553 के मामले में, इस न्यायालय ने कहा कि यह काफी समय तक अनिर्णीत नहीं था कि संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत कोई रिट याचिका राज्य के संविदात्मक दायित्व को लागू करने के लिए पीड़ित पक्ष के पहल पर तब पोषणीय होती है जब राज्य मनमाने तरीके से कार्य करता है, जो निम्नानुसार हैः

8. जैसा कि इस अपील में दिए गए तर्कों से और साथ ही निचली दोनें न्यायालयों के अलग–अलग विचारों से देखा जा सकता है, उनमें से एक प्रश्न जो हमारे समक्ष विचारणीय है वह यह है कि क्या भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत किसी पीड़ित पक्षकार द्वारा दायर रिट याचिका राज्य या राज्य की मशीनरी द्वारा संविदात्मक दायित्व के प्रवर्तन के लिए पोषणीय है।
9. हमारी राय में यह प्रश्न अनिर्णीत नहीं रह गया है और इस न्यायालय के अनेक न्यायिक निर्णयों में यह स्थापित ह चुका है। के.एन. गुरुस्वामी बनाम मैसूर राज्य [(1955) 1 एस.सी.आर. 305] में यह न्यायालय ने निम्नानुसार धारित कियाः

20. अगला सवाल यह है कि क्या अपीलकर्ता रिट के माध्यम से इसकी शिकायत कर सकता है। हमारी राय में, वह एक सामान्य मामले में ऐसा कर सकता था। अपीलकर्ता इन संविदाओं में रुचि रखता है और उसमें राज्य में प्रवर्तित विधि के तहत समान उपचार प्राप्त करने और अन्यों की तरफ समान अवसर प्रदान किये जाने का अधिकार रखता है।

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

इसलिए हम साधारण अनुक्रम में अपीलकर्ता को उसकी मांग के अनुरूप रिट करने की अनुज्ञा देना चाहेगें। लेकिन, उस समय के चलते जिसके कारण यह मामला हमारे समक्ष पहुंचा (परिणामस्वरूप अपीलकर्ता को किसी भी तरह से दोषी नहीं ठहराया जा सकता है, क्योंकि उसने वह सब किया है जिससे जल्दी सुनवाई हो सकती थी), संविदा करने के लिए मुश्किल से पन्द्रह दिन का समय बचा है... इसलिए यह रिट अप्रभावी हो जाएगी और क्योंकि निरर्थक रिट जारी करना हमारी परम्परा नहीं है इसलिए हमें इस अपील को खारिज कर देना चाहिए और अपीलकर्ता ने अपील जो तर्क प्रस्तुत किये है उसे विधि पर छोड़ देना चाहिए।'

10. उक्त मामले में इस न्यायालय की उपरोक्त टिप्पणियों से यह स्पष्ट है , भले ही उस मामले के तथ्यों के आधार पर रिट जारी नहीं किया गया था फिर भी इस न्यायालय ने यह माना है कि दिए गए इन तथ्यों पर यदि कोई राज्य संविदा के मामले में भी मनमाने तरीके से कार्य करता है, तो एक पीड़ित पक्ष संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत रिट के माध्यम से अदालत का दरवाजा खटखटा सकता है और उक्त मामले के तथ्यों के आधार पर अदालत को राहत देने का अधिकार है। के.एन. गुरुस्वामी बनाम मैसूर राज्य के मामले में पारित इस निर्णय का का बाद में डी.एफ.ओ. बनाम राम सनेही सिंह [(1971) 3 एस.सी.सी. 864] के मामले में इस न्यायालय द्वारा अनुसरण कर निम्नानुसार धारित किया गयाः

उस आदेश के माध्यम से उन्होंने प्रतिवादी को उस मूल्यवान अधिकार से वंचित कर दिया है। हम यह नहीं कह सकते है कि केवल उस अधिकार की उत्पत्ति के आधार पर जिसका दावा प्रत्यर्थी ने एक सार्वजनिक प्राधिकरण की ओर से किसी भी मनमानी और गैरकानूनी कार्रवाई के खिलाफ राहत प्राप्त करने के लिए संविदा करते समय किया था, उसे वाद का सहारा लेना चाहिए न कि रिट के माध्यम से याचिका का। के.एन. गुरुस्वामी मामले में इस न्यायालय के निर्णय के दृष्टिगत इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि याचिका पोषणीय थी, भले ही अनुतोष का अधिकार संविदा के कथित विखण्ड़न से उत्पन्न

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

हुआ हो, जहां पर सांविधिक प्रावधानों द्वारा राज्य को दी गयी शक्ति को चुनौती दी गयी थी।'

11. गुजरात राज्य वित्तीय निगम बनाम लोटस होटल्स (प्राइवेट) लिमिटेड [(1983) 3 एस.सी.सी. 379] के मामले में इस न्यायालय रमना दयाराम शेट्टी बनाम भारतीय अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा प्राधिकरण [(1979) 3 एस.सी.सी. 489] के मामले में पारित पूर्व निर्णय का अनुसरण कर धारित किया:

राज्य की मशीनरी जो अनुच्छेद 12 के अधीन "अन्य प्राधिकारी" होगी, उस दूसरे पक्षकार के प्रतिकूल प्रभाव डालने वाले गंभीर वचन का उल्लंघन नहीं कर सकती जिसने उस उपक्रम या वादे पर कार्य किया और स्वयं को प्रतिकूल स्थिति में डाल दिया। राज्य वित्तीय निगम अधिनियम के तहत बनाया गया अपीलकर्ता निगम अनुच्छेद 12 में 'अन्य प्राधिकरण' की अभिव्यक्ति के अंतर्गत आता है और यदि वह इस तरह के वादे से मुकर जाता है, तो यह नहीं कहा जा सकता है कि पीड़ित पक्षकार के लिए एकमात्र उपाय है संविदा भंग से हुयी क्षतिपूर्ति के लिए वाद दायर करेगा और न्यायालय अनुच्छेद 226 के तहत संविदा के विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए बाध्य नहीं कर सकता था।

12. फिर भी प्रथम प्रतिवादी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने कथन किया कि इस न्यायालय ने एल.आई.सी. ऑफ इंडिया बनाम एस्कॉर्ट्स लिमिटेड [(1986) 1 एस.सी.सी. 264] के मामले में एक अलग दृष्टिकोण लिया है, जिसमें इस न्यायालय धारित किया: (एस.सी.सी. पृष्ठ 344, प्रस्तर 102) यदि राज्य द्वारा की गयी कार्रवाई संविदात्मक दायित्वों या अपकृत्य से उत्पन्न दायित्वों से संबंधित है , तब न्यायालय आमतौर पर इसकी जांच नहीं कर सकती है जब तक कि कार्रवाई में कुछ लोक विधि के गुण इससे संलग्न न हो। मोटे तौर पर, न्यायाल राज्य के कार्यों की जांच तब करेगी यदि वे लोक विधि की परिधि के तहत आते हैं और यदि वे निजी वैयक्तिक विधि के क्षेत्र से संबंधित है तब राज्य उन कार्रवाहियों की उनकी जांच नहीं करेगी। वैयक्तिक विधि के क्षेत्र और लोक विधि के क्षेत्र के सीमांकन में कठिनाई होगी। सटीकता के साथ सीमांकन करना असंभव है और हम और ऐसा नहीं करेगें। प्रश्न को प्रत्येक मामले में विशेष कार्रवाई

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

के संदर्भ में तय किया जाना चाहिए, जिस गतिविधि में राज्य या राज्य की साधनता कार्रवाई करते समय लगी हुई है, कार्रवाई का सार्वजनिक कानून या निजीकानून चरित्र और अन्य प्रासंगिक परिस्थितियों। जब राज्य अथवा उसका कोई अंग कॉरपोरेट जगत के साथ व्यापार करता है और किसी कम्पनी के शेयर को खरीदता है तब राज्य स्वयं को ऐसे शेयरधीरी को मिले सभी अधिकारों के साथ शेयरधारी के सामान्य रोल और डान्स और रोब्स कल्पना की करता है इसके पीछे कोई कारण नहीं है कि अंशधारी के रूप में राज्य से यह अपेक्षा की जानी चाहिए कि वे अपना कारण बताए जब कम्पनी के संकल्प के माध्यम से प्रबंधन में परिवर्तन करना चाहता है, जैसे अन्य अंशधारी करते हैं।

13. हमें नहीं लगता कि उपरोक्त मामले में यह न्यायालय किसी भी तरह से, यहां दिए गए मामले में पूर्व निर्णयों में व्यक्त किए गए दृष्टिकोण से परे चला गया है। यह न्यायालय भारतीय जीवन बीमा निगम के मामले में उस मामले के तथ्यों पर आगे बढ़ा और धारित किया कि रिट याचिका के माध्यम से कोई अनुतोष आमतौर पर एक समुचित उपचार नहीं हो सकता है। यह निर्णय प्रतिपादित नहीं करता है कि संविदा के मामलों में किसी नियम की भांति संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत प्रदत्त न्यायालय के क्षेत्राधिकार को बाहर कर दिया गया है। इसके विपरीत, "न्यायालय साधारणतया इसकी परीक्षा नहीं कर सकता है जब तक कि कार्रवाई में कुछ लोक विधि का गुण संलग्न न हो" पद का प्रयोग स्वयं में संकेत करता है कि किसी दिए गए मामले में, अपेक्षित तथ्यात्मक मैट्रिक्स के होने पर ही संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत कोई उपचार प्रदान किया जाएगा।

तब विद्वान अधिवक्ता ने इस न्यायालय द्वारा पारित अन्य निर्णय उ. प्र. राज्य बनाम ब्रिज एंड रूफ कंपनी (इंडिया) लिमिटेड [(1996) 6 एस.सी.सी. 22] का अवलम्ब लिया जहां पर न्यायालय ने धारित किया:

इसके अलावा, प्रश्नगत संविदा एक उपखण्ड़ दिया गया है जिसमें अन्य बातों के साथ साथ उपबंधित है कि मामले को मध्यस्थम को संदर्भित कर विवाद को सुलझाया जा सकता है। मध्यस्थमय विधि संबंधी प्रश्नों के साथ –साथ तथ्य संबंधी प्रश्नों दोनों का निर्धारण कर सकते हैं। जब संविदा स्वयं ही संविदा से उद्भूत विवादों के निपटारा करने के ढंग का उपबंध करती है तब ऐसा कोई कारण नहीं है कि पक्षकारों को उस उपचार का

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

अनुसरण और ग्रहण नहीं करना चाहिए और अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय की असाधारण अधिकारिता का आह्वान नहीं करना चाहिए। इस मामले में एक प्रभावी वैकल्पिक उपचार संविदा में ही उपबंधित है और न्यायालय के लिए एक अच्छा आधार है कि वे अनुच्छेद 226 के तहत अपनी असाधारण क्षेत्राधिकार के प्रयोग को मना कर दे।

14. हमारी राय में, प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तुत तर्क पर यह निर्णय पुनः कोई मदद नहीं करता है कि संविदा संबंधी मामलों में संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उपचार प्रदान नहीं किया जा सकता है। उपरोक्त उद्धरण से यह पता चलता है कि चूंकि उस मामले में संविदा में मध्यस्थता संबंधी खंड जुड़ा है इसलिए न्यायालय ने संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उपचार प्रदान करने से मना कर दिया। हमने विशेष रूप से अपने समक्ष उपस्थित अपील के पक्षकारों से पूंछताछ की है और हमें बताया गया है कि प्रश्नगत संविदा में मध्यस्थता संबंधी ऐसा कोई खंड नहीं है। यह सर्वविदित है कि यदि किसी विवाद के पक्षकार मध्यस्थता द्वारा अपने विवाद को निपटाने के लिए सहमत हो गए थे और यदि उस संबंध में कोई करार होता है तब न्यायालय मध्यस्थता के माध्यम से उपचार दिये बिना किसी अन्य उपचार प्रदान करने की अनुमति नहीं प्रदान करेंगी जब तक कि विवाद के दोनों पक्षकार विवाद सुलझाने के लिए अन्य तरीके पर सहमत न हों। चूंकि प्रस्तुत अपील में ऐसा नहीं है, इसलिए ब्रिज एंड रूफ कंपनी [(1996) 6 एस.सी.सी. 22] के मामले में इस न्यायालय ने जो निष्कर्ष निकाला वह प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तुत तर्क यह कि संविदा संबंधी मामलों में रिट याचिका पोषणीय नहीं है, की कोई मदद नहीं करता है।'

20.इस न्यायालय ने इस सिद्धांत को नोबल संसाधन बनाम उड़ीसा राज्य और अन्य (2006) 10 एस.सी.सी. 236 (प्रस्तर 15), भारतीय खाद्य निगम और अन्य बनाम एस.ई.आई.एल. लिमिटेड और अन्य (2008) 3 एस.सी.सी. 440 (प्रस्तर 16), सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया बनाम देवी इस्पात लिमिटेड और अन्य (2010) 11 एस.सी.सी. 186 (प्रस्तर 28) और सूर्य कंस्ट्रक्शंस बनाम उ.प्र. राज्य और अन्य (2019) 16 एस.सी.सी. 794 (प्रस्तर 3) के मामलों में दृढ़ता से अभिनिर्धारित किया है।

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

21. डॉ. सिंघवी द्वारा उद्धृत निर्णय किसी भी तरह से पूर्वोक्त सिद्धांत से कमतर नहीं हैं। राधाकृष्ण अग्रवाल और अन्य बनाम बिहार राज्य और अन्य (1977) 3 एस.सी.सी. 457 ऐसा निर्णय था जिसमें पट्टे के तहत राज्य सरकार को देय रॉयल्टी की दरों में उसके द्वारा संशोधन और उक्त पट्टे को निरस्तीकरण के विरूद्ध दायर रिट याचिको को पक्षकारों के बीच हुए संविदा द्वारा शासित कहा गया, भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 के प्रावधानों को आकर्षित करने के लिए राज्य कार्रवाई के माध्यम से कोई अनुचित व्यवहार नहीं किया जा रहा है। इस तरह के सभी सवालों का निपटारा दीवानी अदालतों द्वारा किया जाना है, न कि रिट याचिकाओं द्वारा, इस प्रस्ताव से स्पष्ट रूप से असंतोष किया गया है, क्योंकि इस फैसले के बाद से 'काफी समस्या का समाधान हो चुका है', जो आपातकाल के दौरान पारित किया गया था जब व्यक्तियों के मौलिक अधिकारों को निलंबित कर दिया गया था। इस प्रकार, वेरिगामो नवीन बनाम आन्ध्र प्रदेश सरकार एवं अन्य (2001) 8 एस.सी.सी. 344, इस न्यायालय ने कहाः

"21. इस प्रश्न पर कि जिस उपचार को उच्च न्यायालय से मांग की गयी है और उसके द्वारा प्रदान किया गया है वह विशुद्ध रूप से संविदा संबंधी क्षेत्र में उत्पन्न होती है और इसलिए, उच्च न्यायालय को संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग नहीं करना चाहिए और वाई. एस. राजा रेड्डी बनाम ए.पी. माइनिंग कॉर्पन लिमिटेड [(1988) 2 ए एलटी 722] में आंध्र प्रदेश च न्यायालय के निर्णय और हर शंकर बनाम उप आबकारी और कराधान आयुक्त [(1975) 1 एस.सी.सी. 737], राधाकृष्ण अग्रवाल बनाम बिहार राज्य [(1977) 3 एस.सी.सी 457], रामलाल एंड संस बनाम राजस्थान राज्य [(1976) 1 एस.सी.सी. 112], शिव शंकर मिल्स बनाम हरियाणा राज्य [1980 (2 एस.सी.सी. 437] रमना शेट्टी बनाम अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा प्राधिकरण [1979] और एस.सी.सी. 489 में इस न्यायालय द्वारा पारित निर्णयों का दृढ़तापूर्वक अवलम्ब लेना चाहिए। यद्यपि राधाकृष्ण अग्रवाल प्रकरण [(1977) 3 एस.सी.सी. 457] में उत्पन्न इस प्रकार का इस न्यायालय द्वारा पारित निर्णयों में से एक है जिसमें संविदा संबंधी क्षेत्र में न्यायिक समीक्षा से काफी निष्कर्ष निकाला जा चुका है। जिन मामलों में निर्णय लेने वाले प्राधिकारी ने अपनी वैधानिक शक्ति से परे चले गये अथवा ऐसी शक्ति के प्रयोग में

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

प्राकृतिक न्याय के नियमों अथवा सिद्धांतों का उल्लंघन किया अथवा उनका निर्णय विकृत है अथवा कोई तर्कहीन आदेश पारित किया वहां पर इस न्यायालय ने पक्षकारों और सरकार एवं उसकी एजेंसियों के बीच संविदा हो जाने के बाद भी हस्तक्षेप किया है । हम द्वारकादास मारफतिया एंड संस बनाम बम्बई बंदरगाह के न्यासी बोर्ड [(1989) 3 एस.सी.सी. 293], महाबीर ऑटो स्टोर्स बनाम इंडियन ऑयल कॉर्पन [(1990) 3 एस.सी.सी. 752] और श्रीलेखा विद्यार्थी (कुमारी) बनाम उ.प्र. राज्य [(1991) 1 एस.सी.सी. 212] के मामले में पारित इस न्यायालय के तीन निर्णयों उल्लेख कर सकते हैं। जहां पर संविदा भंग में वैधानिक दायित्व का भंग शामिल है, जब वैधानिक प्राधिकरण द्वारा वैधानिक शक्ति के प्रयोग में आपत्तिजनक आदेश पारित किया गया, भले ही विवाद्य संविदा से उत्पन्न अथवा उससे संबंधित है, इसको सार्वजनिक विधि की परिधि में ले आता है क्योंकि वैधानिक शक्ति का प्रयोग संविदा से परे है। सरकार का किसी के साथ जिसके साथ वह चाहे व्यापार करने स्वतंत्रता तर्कशीलता और निष्पक्षता के साथ–साथ लोकहित की शर्तों के अधीन होती है। किसी संविदा को करने के पश्चात, वैधानिक प्रावधानों की शर्तों के तहत, जैसा कि वर्तमान मामले में है, संविदा को रद्द करने में ऐसा नहीं कहा जा सकता है कि मामला विशुद्ध रूप से संविदा संबंधी क्षेत्र के तहत आता है। इसलिए, हम यह सुझाव देना उचित नहीं समझते हैं कि प्रस्तुत मामला विशुद्ध रूप से संविदा से उत्पन्न होता है और इसलिए, संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत हस्तक्षेप करने की प्रार्थना नहीं किया जाता है।
यह तर्क भी खारिज हो गया है। "

(प्रभाव वर्धित)

22. ऋषि किरण लॉजिस्टिक्स बनाम कांडला पोर्ट एवं अन्य के न्यासी बोर्ड (2015) 13 एस.सी.सी. 233 के मामले में, इस न्यायालय ने कहा कि अनुच्छेद 226 के तहत दायर रिट याचिका चूंकि एक लोक विधि उपचार है इसलिए उसमें 'लोक विधि का तत्व' उपस्थित होना चाहिए इससे पहले कि अनुच्छेद 226 को लागू किया जाए – देखें प्रस्तर 37 और 38 जोशी टेक्नोलॉजीज इंटरनेशनल इंक बनाम भारत संघ और अन्य (2015) 7 एस.सी.सी. 728 के मामले में इस विषय पर विधि का विस्तृत रूप से प्रतिपादन कर न्यायालय ने कहा:"

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

69. इस प्रकार पूर्वोक्त सिद्धांतों में व्यक्त यह स्थिति को उस चर्चा के संदर्भ में समझना होगा जिसका हमने ऊपर उल्लेख किया है इसके अनुसार, इसमें कोई संदेह नहीं है, संविदात्मक मामलों में भी रिट याचिका की पोषणीया पर पूर्ण रोक नहीं है अथवा जहां तथ्य संबंधी प्रश्न पर विवाद है अथवा जहां धन संबंधी दावा भी किया गया है। उसी समय यह उच्च न्यायालय के विवेकाधिकार पर है कि वह कुछ परिस्थितियों के तहत ऐसा करने से मना कर सकता है। ऐसा भी है कि न्यायालय निम्नलिखित परिस्थितियों में, "सामान्यतः", इस तरह के विवेकाधिकार का प्रयोग नहीं करेगाः

69. 1. न्यायालय तब तक इस मुद्दे की जांच नहीं कर सकेगा जब तक इस कार्रवाई में कुछ लोक विधि के गुण न हों।

69. 2. जब संविदा में विवाद के निपटारे का कोई विशिष्ट तरीका उपबंधित किया जाता है, तो उच्च न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करने से इनकार कर देगा और पक्षकार से कहेगा कि वे करार में उपबंधित तरीके से विवाद का निपटारा करें, विशेष तौर से तब जब माध्यस्थम के माध्यम से विवाद का निपटारा किया जाना हो।

22 69.3. यदि तथ्य संबंधी विवाद के बहुत गंभीर प्रश्न मौजूद हैं जिनकी जटिल प्रकृति हो और उनके निर्धारण के लिए मौखिक साक्ष्य की आवश्यकता हो।

69. 4. विशेष रूप से संविदात्मक दायित्वों से उत्पन्न होने वाले धन संबंधी दावों को आम तौर पर असाधारण परिस्थितियों को छोड़कर स्वीकार नहीं किया जाता है।

70. इसके अलावा, इस न्यायालय के विभिन्न निर्णयों से उत्पन्न विधिक स्थिति, जो राज्य/सार्वजनिक प्राधिकरण द्वारा निजी पक्षकारों के साथ किए गए संविदा से संबंधित

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

विभिन्न स्थितियों/पहलुओं से संबंधित है, को संक्षेप में निम्नानुसार प्रस्तुत किया जा सकता हैः

70. 1. संविदा करने के चरण में, राज्य के कृत्य विशुद्ध रूप से उसकी कार्यकारी क्षमता में होते हैं और निष्पक्षता के दायित्वों से बंधे होते है।

70. 2. राज्य अपनी कार्यकारी क्षमता में, संविदात्मक क्षेत्र में भी, निष्पक्ष रूप से कार्य करने के लिए बाध्य है और थोड़ा भी भेदभाव नहीं कर सकता है।

70. 3. उन मामलों में भी जहां प्रश्न संविदा से पूर्व चुनाव अथवा प्रतिस्पर्धी दावों के प्रतिफल से संबंधित है, संविधान के अनुच्छेद 14 के उल्लंघन का सवाल उठने से तथ्यों की जांच कर उसे पता लगाया जाना चाहिए। यदि वे तथ्य विवादित हैं और उसमें साक्ष्य का मूल्यांकन किये जाने की आवश्यकता है, जिसकी शुद्धता का केवल विस्तृत साक्ष्य लेकर, गवाहों की परीक्षा और जिरह कर संतोषजनक परीक्षण किया जा सकता है तब इस मामले को संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत की कार्यवाही में सुविधाजनक या संतोषजनक ढंग से तय नहीं किया जा सकता है। ऐसे मामलों में न्यायालय पीड़ित पक्ष को सिविल वाद आदि के वैकल्पिक उपाय का सहारा लेने का निर्देश दे सकता है।

70. 4. संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय की रिट अधिकारिता का आशय स्वेच्छा से उपगत बाध्यता से बचने के लिए सुकर बनाना नहीं था

70. 5. संविदात्मक दायित्व से बचने के लिए रिट याचिका पोषणीय नहीं थी। वाणिज्यिक कठिनाई का उत्पन्न होना, संविदा अनुबंधित की शर्तों का अनुपालन कठिनाई अथवा असुविधा संविदा की शर्तों के साथ उसका अनुपालन में कोई औचित्य प्रदान नहीं कर सकती है जिसे पक्षकारों ने सोच विचार कर स्वीकार किया था। यह कभी नहीं हो सकता है कि एक आज्ञप्तिधारी आज्ञप्ति के बगैर कार्य कर सके जब ऐसा करना उसके लिए लाभदायक होः

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

और यदि वह इसको अपने व्यवसाय के संचालन के लिए व्यावसायिक रूप से अनभिज्ञ पाते हैं तब वह उन शर्तों को चुनौती दे सकते है जिनके तहत वह लाइसेंस लेने के लिए सहमत हुए थे।

70. 6. आमतौर पर, जहां अनुबंध के उल्लंघन की शिकायत की जाती है, ऐसे उल्लंघन की शिकायत करने वाला पक्ष अनुबंध के विशिष्ट प्रदर्शन के लिए मुकदमा कर सकता है, यदि अनुबंध विशेष रूप से प्रदर्शन करने में सक्षम है। अन्यथा, पक्षकार क्षतिपूर्ति के लिए वाद दायर कर सकता है।

70. 7. रिट वहां पर जारी किया जा सकता है जहां कार्यकारी कृत्य विधिविरूद्ध है या किसी निगम के संबंध में भी विधि के समक्ष समानता या कानून के समान संरक्षण से इनकार किया जाता है अथवा यदि यह दर्शित किया जा सकता है कि लोक प्राधिकारी की कार्यवाही सुनवाई का अवसर दिये बिना और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन था जिसके उपरान्त यह धारित किया गया कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धान्तों का अवलोकन किये बिना कार्यावाही नहीं की जा सकता है।

70. 8. यदि निजी पक्षाकार और राज्य/तंत्र और/या राज्य की एजेंसी के बीच संविदा किसी प्राइवेट विधि के तहत है और उसमें लोक विधि का कोई तत्व नहीं है तब आमतौर पर पीड़ित पक्षकार सामान्य नागरिक विधि के तहत उपचार प्रदान करे बजाय भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय रिट दायर कर और न्यायालय से असाधारण क्षेत्राधिकार के प्रयोग की मांग करे।

70. 9. राज्य के साथ संविदा में लोक विधि और प्राइवेट विधि के बीच का अंतर धुंधला हो रहा है। तथापि, यह पूरी तरह से तिरस्कृत नहीं किया गया है और जहां मामला विशुद्ध रूप से संविदा के प्राइवेट क्षेत्र से है इस न्यायालय ने कहा कि रिट पोषणीय नहीं है। लोक विधि और प्राइवेट विधि के अधिकारों और उपचारों के बीच द्वंद्व प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करेगा और लोक विधि और प्राइवेट विधि के उपचारों के मध्य अन्तर सटीकता से सीमांकन नहीं किया जा सकता है। वास्तव में, प्रत्येक मामले की जांच उसके तथ्यों के आधार पर की जानी चाहिए चाहे पक्षकारों के मध्य संविदा संबंधी संबंधों में लोक विधि के तत्व मौजूद हों। जब किसी मामले विशेष के तथ्यों से पता चलता है कि कार्य की

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

प्रकृति अथवा विवाद में लोक विधि के तत्व शामिल हैं तब भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत रिट याचिका के माध्यम से उच्च न्यायालय इस मामले की जांच कर सकता है कि क्या राज्य या राज्य का तंत्र या एजेंसी की कार्रवाई निष्पक्ष, न्यायसंगत और न्यायसंगत है अथवा प्रासंगिक कारकों पर विचार किया गया है और निर्णय लेने की प्रक्रिया में अप्रासंगिक कारक पर विचार नहीं किया गया है अथवा यह निर्णय मनमाना नहीं है।

70. 10. किसी नागरिक की मात्र युक्तियुक्त या विधिसम्मत प्रत्याशा, ऐसी स्थिति में, अपने आप में एक अलग प्रवर्तनीय अधिकार नहीं हो सकता है, लेकिन इस पर विचार करने और उसे उचित वजन देने में विफलता निर्णय को मनमाने ढंग से प्रस्तुत कर सकती है, और इस तरह से एक वैध अपेक्षा के उचित विचार की आवश्यकताएं गैर–मनमानी के सिद्धांत का हिस्सा बनती हैं।

70. 11. संविदात्मक दायित्वों के तहत आने वाले विवादों के संबंध में न्यायिक समीक्षा का क्षेत्र अधिक सीमित हो सकता है और संदिग्ध मामलों में पक्षकारों को विशुद्ध रूप से संविदात्मक विवादों के न्यायनिर्णयन के लिए प्रदत्त उपायों के माध्यम से उनके अधिकारों को निर्वासित किया जा सकता है।'

23. यह कहा जा सकता है कि प्रत्येक मामला जिसमें कोई नागरिक/व्यक्ति अपने मौलिक अधिकारों के उल्लंघन के लिए रिट कोर्ट के दरवाजा खटखटाता है, वह ऐसा मामला है जिसमें एक 'लोक विधि का तत्व' सन्निहित है जो उन मामलों से भिन्न केवल संविदा के भंग और उसकी क्षतिपूर्ति से संबंधित हैं। जब कभी राज्य के विरुद्ध प्राकृतिक न्याय के भंग की दलील दी जाती है यदि उक्त दलील पोषणीय है तब वह संविधान में राज्य की मनमाना कार्रवाई है, जो भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 के प्रावधानों को आकर्षित करती है– देखें: नवाबखान अब्बासखान बनाम गुजरात राज्य (1974) 2 एससीसी 121 पैरा 7, इसलिए वर्तमान मामला एक ऐसा मामला है जिसमें एक 'लोक विधि के तत्व' शामिल है जिसमें याचिकाकर्ता (प्रत्यर्थी–1) रिट याचिका प्रस्तुत रिट न्यायालय का दरवाजा खटखटाया जिसमें उसने न सुने जाने का आरोप लगाया और कहा कि सम्पूर्ण

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

कार्यवाही जिसके चलते निविदा तथा उसका वाद खारिज कर दिया वह उसकी अनुपस्थित में तथ्यों के एकपक्षीय मूल्यांकन के आधार पर
किया गया।

24. डॉ. सिंघवी ने जिन अन्य निर्णयों को अपने लिखित कथन में उद्धृत किया वह इन तथ्यों पर भिन्न हैं, क्योंकि ये सभी लोक–हित मुकदमों अथवा निविदा आवेदकों से संबंधित है, जिन्हें बदला जा चुका है, उन्होंने अनुच्छेद 226 के तहत प्रस्तावित परियोजना के खिलाफ स्टे आदेश मांग करते हुए रिट कोर्ट का दरवाजा खटखटातया हैं, जिससे काफी विलंबित हो सकता हैं और उसकी लागत बढ़ सकती है जो लोक हित के विरूद्ध है। यह इन स्थितियों में है कि इस तरह की रिट याचिकाओं को स्वीकार करने और अंतरिम आदेशों को पारित करने से पूर्व, रिट कोर्ट को परस्पर विरोधी सार्वजनिक हितों का मूल्यांकन करने के लिए बहुत सावधान रहना चाहिए, और केवल तभी हस्तक्षेप करना चाहिए जब रिट याचिका को स्वीकार करने में लोक हित शामिल हो। यह वही निष्कर्ष है जो रौनक इंटरनेशनल लिमिटेड बनाम आई.वी.आर. कंस्ट्रक्शन लिमिटेड और अन्य (1999) 1 एस.सी.सी. 492 पैराग्राफ 11 से 13,24 और 25 के मामले में अभिनिर्णीत किया गया था। इसी के जैसा प्रभाव रखने वाला निर्णय जगदीश मंडल बनाम उड़ीसा राज्य और अन्य (2007) 14 एससीसी 517 पैरा 22 के मामले में पारित किया गया है।

25. इसी तरह, मिशिगन रबर (इंडिया) लिमिटेड बनाम कर्नाटक राज्य और अन्य (2012) 8 एस.सी.सी. 216 के मामले में न्यायालय द्वारा पारित सर्वश्रेष्ठ निर्णय पुनः रिट कोर्ट से संबंधित है जो सार्वजनिक हित को ध्यान रखते हुए निविदा प्रदान किये जाने में हस्तक्षेप नहीं करता है। देखेंः पैराग्राफ 23 और 24। टाटा सेलुलर बनाम भारत संघ (1994) 6 एस.सी.सी. 651 (प्रस्तर 70 और 71), और राजस्थान राज्य 26 हाउसिंग बोर्ड और अन्य बनाम जी.एस. इन्वेस्टमेंट्स एंड अन्य (2007) 1 एस.सी.सी. 477 (प्रस्तर 10) के मामले में पारित निर्णय इस आशय के हैं।

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

26. दोनों विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ताओं ने प्राकृतिक न्याय के सिद्धान्त सुने जाने के अधिकार पर चुप हो गये। डॉ. सिंघवी ने तर्क दिया कि यह न्यायालय के हाथों में दिया गया कोई नम्य उपकरण नहीं है, लेकिन यह फलदायी होगा जहां पर कोई पूर्वाग्रह कारित नहीं होता है और जहां किसी आदेश को अपास्त करने के लिए यह कोई निष्क्रिय औपचारिकता हो जाएगा, क्योंकि अभिलेख पर मौजूद सभी तथ्यों को मान लिया गया है जिसमें प्रत्यर्थी–1 द्वारा कुछ भी जोड़ा अथवा घटाया नहीं जा सकता है। दूसरी ओर, श्री द्विवेदी ने तर्क दिया कि यह एक ऐसा मामला है जहां पर उनके मुवक्किल को न सुनकर आदेश को पारित किये गये है और प्राकृतिक न्याय की पूरी तौर से अवहेलना किया गया है जिसके परिणामस्वरूप उनका मुवक्किल को गंभीर रूप से पूर्वाग्रह कारित हुआ है।

27. प्राकृतिक न्याय उतना प्राचीन जिनता कि पृथ्वी पर जन्मा प्रथम व्यक्ति –बाइबिल 'एडम' जे.आर. लुकास ने अपनी पुस्तक 'ऑन जस्टिस' के पृष्ठ 86 में कहा है: इसलिए, कृत्य की सुनवाई करते समय हम यह पता चले कि किसी व्यक्ति ने गलत किया, वहां पर ऐसे तर्क की आवश्यकता होती है कि हमें अशुद्ध अनुमान को ठीक करने के लिए कल्पित प्रतिनिधि को अनुमति देनी चाहिए या उसको दोषी ठहराने वाले आशय को अस्वीकार या अन्यथा कार्रवाई को अस्वीकार करना चाहिए। भगवान को एडम से प्रश्न करने की आवश्यकता पड़ी 'क्या तुमने उस पेड़ को खा लिया है जिसको मैंने तुझको खाने के लिए कहा था कि इस पेड़ को तुझे नहीं खाना चाहिए? ' क्योंकि यह जरूरी था कि एडम को तब तक दोषी नहीं ठहराया जाना चाहिए या उसे दंडित नहीं किया जाना चाहिए जब तक कि उसने उसी काम को नहीं किया हो। अगर उसने साक्ष्य दिया होता या अगर उसने एडम को इस गलतफहमी के तहत खाने के लिए उकसाया होता कि यह अन्य अत्यक्त वृक्ष से आया था तब एडम ने पाप नहीं लगता और उसे ईडन से बाहर नहीं निकाला जाना चाहिए था। यदि केवल अभियुक्त आरोप स्वीकार करता है या आरोप का सामना करता तब अभियुक्त अपने आचरण को किसी अन्य तरीके से दृढ़तापूर्वक बता नहीं कर सकता है, क्या हम तार्किक रूप से निष्कर्ष निकाल के अधिकारी है जिसको अभियुक्त ने वास्तव में किया।"

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

28. इस न्यायालय द्वारा पूर्व में पारित निर्णयों में कुछ में प्राकृतिक न्याय की अवहेलना को अपने आप में प्रभावित व्यक्ति के प्रति पूर्वाग्रह से ग्रसित माना गया और पूर्वाग्रह के साक्ष्य, प्राकृतिक न्याय की अवहेलना का स्वतंत्र साक्ष्य अनावश्यक माना गया। इस नियम का एकमात्र अपवाद वहां उत्पन्न होता है जहां "स्वीकृत या निर्विवाद" तथ्यों पर केवल एक निष्कर्ष संभव होता है, और कानून के तहत केवल एक दंड अनुमन्य होता है। ऐसे मामलों में, न्यायालय प्राकृतिक न्याय के पालन को बाध्य करने के लिए रिट जारी नहीं कर सकता है, इसलिए नहीं कि प्राकृतिक न्याय का पालन करना आवश्यक नहीं है, बल्कि इसलिए कि न्यायालय ऐसे रिट जारी नहीं करते हैं जो 'निरर्थक' हैं – देखें एस.एल. कपूर बनाम जगमोहन और अन्य (1980) 4 एस.सी.सी. 379 पैरा 24। पी. डी. अग्रवाल बनाम भारतीय स्टेट बैंक और अन्य (2006) 8 एस. सी. सी. 776 वाले मामले में न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि विधि इस कथन में "व्यापक परिवर्तन" आया है, जो इस प्रकार हैः

39. इस न्यायालय का विनिश्चय एस. एल. कपूर बनाम जगमोहन [(1980) 4 एस. सी. सी. 379] , जहां पर श्री राव ने यह प्रतिवाद करने के लिए दृढ़ विश्वास व्यक्त किया कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत का पालन न करने से स्वयं प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है या इसे "क्योंकि इससे प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है" नहीं पढ़ा जाना चाहिए, प्रस्तुत मामले में लागू हुआ नहीं कहा जा सकता है। प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, व्यापक परिवर्तन से गुजरा है। स्टेट बैंक ऑफ पटियाला बनाम एस.के. शर्मा [(1996) 3 एस.सी.सी. 364] और राजेंद्र सिंह बनाम मप्र राज्य [(1996) 5 एस.सी.सी. 460] में इस न्यायालय के निर्णयों के दृष्टिगत विधि का सिद्धांत यह है कि कुछ वास्तविक पूर्वाग्रह शिकायतकर्ता को कारित हुआ होगा। न्यायालय अपने इस अवधारणा से हट चुका है कि थोड़े से उल्लंघन से आदेश में शून्यता आ जाएगी। सुने जाने का अधिकार का सिद्धांत/सिद्धांत, उन मामलों के बीच एक स्पष्ट अंतर का प्रतिपादन किया गया है जहां पर कोई सुनवाई नहीं हुई थी और उन मामलों में जहां सिद्धांत का केवल तकनीकी उल्लंघन था।न्यायालय प्रत्येक मामले और परिस्थितियों के आधार पर न्यायालय प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों को लागू करता है। यह मामले के प्रासंगिक तथ्यों

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

और परिस्थितियों का संदर्भ केबिना निर्वात में लागू नहीं होता है। यह कोई अनियंत्रित घोड़ा नहीं है। इसे बांधकर नहीं रखा जा सकता।"

(प्रभाव वर्धित)

29. समान रूप से, प्राकृतिक न्याय के ही उल्लंघन से परे जो पूर्वाग्रह कारित हुआ है ऐसे मामले में मौजूद नहीं कहा जा सकता है जिसमें तथ्य स्वीकार किये गये हों। इस प्रकार, के.एल. त्रिपाठी बनाम भारतीय स्टेट बैंक और अन्य (1984) 1 एस.सी.सी. 43 के मामले में, न्यायालय धारित किया:"

29. हमारी राय है कि श्री गर्ग सही हैं कि प्राकृतिक न्याय के नियम जैसा कि हमने एतद्पूर्व निर्धारित किया है, वह दोषी अधिकारी को आरोपों के संबंध में सबूत देने या अपने विरूद्ध लगाये गये आरोपों से इनकार करने का अवसर प्रदान करते हैं। दूसरे, उन्होंने प्रस्तुत किया कि भले ही नियमों में कोई वैधानिक बल नहीं था और भले ही पार्टी ने अनुबंध से खुद को बाध्य किया हो, जैसा कि उन्होंने कर्मचारी नियम को स्वीकार किया था, एक वैधानिक निगम के साथ कोई अनुबंध नहीं हो सकता है जो प्राकृतिक सिद्धांतों का उल्लंघन है किसी कर्मचारी की सेवा समाप्त करने से संबंधित घरेलू जांच के मामलों में न्याय। हम इस संबंध में श्री गर्ग के मूल प्रस्तुतिकरण सहमत हैं, लेकिन हम पाते हैं कि जिन प्रासंगिक नियमों को हमने एतद्पूर्व निर्धारित किया है, उनका अनुपालन किया गया है, भले ही उन नियमों को पढ़ा जाए कि प्राकृतिक न्याय की आवश्यकताओं को उक्त नियमों में निहित किया गया था या यहां तक कि यदि प्राकृतिक न्याय के ऐसे बुनियादी सिद्धांतों को निहित किया गया था, तो इस मामले में पारित आदेश के संबंध में प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का कोई उल्लंघन नहीं हुआ है। किसी आदेश के संबंध में जिसमें भारतीय स्टेट बैंक की तरह सांविधिक निगमों के किसी अधिकारी अथवा कर्मचारी के विरूद्ध प्रतिकूल अथवा दण्ड़ात्मक परिणाम निहित है तब प्राकृतिक न्याय के सिद्धान्तों के अनुरूप परिस्थितियों की अपेक्षाओं से संगत उन आरोपों की जांच की जानी चाहिए जहां तक वह किसी विशेष परिस्थिति तक लागू होते थे। इसलिए चाहे प्राकृतिक न्याय के किसी विशेष सिद्धांत का उल्लंघन किया गया है या नहीं, आरोपों की प्रकृति, ऐसी जांच को

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

शासित करने वाली वैधानिक या प्रासंगिक नियमों की पृष्ठभूमि में की गई जांच की प्रकृति का आँकलन किया जाना चाहिए ।

यहां प्राकृतिक न्याय का उल्लंघन जिस पर आपत्ति उठायी गयी वह यह थी कि उन्हें उन तथ्यों का खण्ड़न करने का अवसर नहीं दिया गया जिन्हें उनकी अनुपस्थिति में एकत्र किया गया था। जैसा कि जे. आर. लुकास द्वारा ऑन जस्टिस में किया गया है, प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत मूल रूप से, यदि हम ऐसा कहें, तो वास्तविक वाक्यांश "ऑडी अल्टेरम पार्टम" से निकलता है, जिसे पहली बार सेंट ऑगस्टीन (डी डुबस एनिमबस, XIV, 22 जे.पी.मिगने, पी.एल. 42,110) द्वारा विरचित किया गया था।

xxx xxx xxx

32. यह मूल अवधारणा प्रशासनिक, न्यायिक या अर्ध–न्यायिक कार्रवाई में साम्यपूर्ण है। कार्रवाई में साम्या की अवधारणा पाक्षकारों के बीच विशेष विवाद पर, यदि कोई हो, निर्भर करना चाहिए। यदि उस व्यक्ति की विश्वसनीयता संदेहास्पद है जिसने गवाही दी है या कुछ जानकारी दी है, या यदि उस व्यक्ति का कथानक या बयान विवादास्पद है, तो प्रतिपरीक्षा का अधिकार अनिवार्य रूप से कार्रवाई में निष्पक्ष होना चाहिए लेकिन जहां तथ्यों के बारे में कोई विवाद नहीं है, लेकिन उन परिस्थितियों के कुछ उदाहरण हैं जहां पर निष्पक्ष कार्रवाई को उचित ठहराने के लिए प्रतिपरीक्षा की आवश्यकता नहीं है। जब तथ्यों संबंधी प्रश्न पर कोई विवाद नहीं था, तो किसी आदेश से पीड़ित पक्षकार को कोई वास्तविक पूर्वाग्रह कारित नहीं हुआ है, प्रतिपरीक्षा का किसी भी औपचारिक अवसर का न दिया जाना अपने आप में न्यायालय द्वारा पारित निर्णय को अवैध या दूषित करार नहीं देता है। यह बहुधा तब होता है जब पक्षकार जिसके विरूद्ध कोई आदेश पारित किया गया है वह उन तथ्यों पर विवाद नहीं करता है और संस्करण की सत्यता या बयान की विश्वसनीयता का परीक्षण करने की मांग नहीं करता है।

33. जो पक्षकार अपनी अनुपस्थिति में एकत्र रिकॉर्ड या गवाही से प्राप्त साक्ष्यों की सत्यता पर प्रतिवाद नहीं करना चाहता है, वह किसी भी बाद की मांग में सफल होने की

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

उम्मीद नहीं कर सकता है कि जिरह का कोई अवसर मुख्यतः तब नहीं दिया गया था जब इसकी मांग नहीं किया गया था और बयानों की सत्यता पर कोई विवाद नहीं था। जहां तथ्यों के बारे में कोई विवाद नहीं है, या विवादित तथ्यों पर कोई बल नहीं डाला जाता है, लेकिन उन कृत्यों का स्पष्टीकरण मात्र, ऐसे मामलों में जिरह न किया जाने से कोई पूर्वाग्रह कारित नहीं होता है।'

(प्रभाव वर्धित)

30. इसी तरह, उ.प्र. राज्य बनाम नीरज अवस्थी और अन्य (2006) 1 एस.सी.सी. 667 के मामले में, इस न्यायालय ने कहा कि यह निर्विवाद है कि जहां विधि में काटछांट वैध होगा वहां प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों को आकर्षित नहीं किया जाएगा, जब तक कि उससे कुछ दोष न हो जिसने पूर्वाग्रह कारित होगाः

47. यदि कर्मचारी उ.प्र. औद्योगिक विवाद अधिनियम के तहत कामगार हैं तो वे इसके अधिनियम के तहत संरक्षित हैं। उ. प्र. औद्योगिक विवाद नियमों के नियम 42 और 43 में यह प्रावधान है कि उ.प्र औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 6–एन के प्रावधानों के संदर्भ में किसी भी छंटनी को प्रभावी बनाने से पूर्व संबंधित कर्मचारी एक महीने के नोटिस या उसके बदले में एक माह का वेतन और क्षतिपूर्ति के तौर पर प्रत्येक वर्ष की समाप्ति पर पन्द्रह दिनों की मजदूरी के के हकदार होंगे। यदि औद्योगिक विवाद अधिनियम के तहत इस तरह की छंटनी किया जाता है तो प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के अनुपालन का प्रश्न ही नहीं उठेगा। प्राकृतिक न्याय का सिद्धांत तभी आकर्षित होगा जब कुछ व्यक्तियों की दण्ड़स्वरूप उनकी सेवा समाप्त कर दिया जाए एतद्द्वारा कलंक जुड़ा होता है।

48. विवेका नंद सेठी बनाम अध्यक्ष, जम्मू–कश्मीर बैंक लिमिटेड़ [(2005) 5 एस.सी.सी. 337] (एस.सी.सी. पृष्ठ 345, पैरा 22) मामले में निम्नानुसार अभिनिर्णीत किया गयाः

22. स्पष्ट है प्राकृतिक न्याय का सिद्धांत कोई बेलगाम घोड़ा नहीं है। जब तथ्यों को स्वीकार किया जाता है, तो एक जांच मजह एक औपचारिकता होगी। विबंध का सिद्धान्त भी लागू होगा। [देखेंः गुरजीवन गरेवाल (डा.) बनाम डॉ. सुमित्रा दाश (2004) 5

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

एस.सी.सी. 263] प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का तथ्यों और परिस्थियों के अनुकूल होना चाहिए। इस सिद्धान्त सीधे नहीं लगाया जा सकता है। इसे मामले के प्रासंगिक तथ्यों और परिस्थितियों संदर्भ के बिना हवा में लागू नहीं किया जा सकता है।"

49. इसलिए, उच्च न्यायालय को यह कहना होगा कि उसने यह कहकर विधि में गलती पारित किया कि प्राकृतिक न्याय के सिद्वान्त का अनुपालन अपेक्षित था।'

31. प्रबंध निदेशक, ई.सी.आई.एल. और अन्य बनाम बी. कर्णकुमार और अन्य (1993) 4 एस.सी.सी. 727 के मामले में पांच न्यायाधीशों की खंडपीठ ने अनुच्छेद 311 (2) के तहत प्रस्तुत रिपोर्ट की संवैधानिक आवश्यकता पर चर्चा करने के उपरान्त निम्नानुसार धारित किया:

30. इस प्रकार जिन आकस्मिक प्रश्नों को उठाया गया है उसका उत्तर इस प्रकार दिया जा सकता है:

xxx xxx xxx

अगले प्रश्न जिसक उत्तर दिया जाना है वह यह कि दंड के आदेश पर क्या प्रभाव पड़ता है जब जांच अधिकारी की रिपोर्ट कर्मचारी को नहीं प्रदान किया जाता है और ऐसे मामलों में उसे क्या राहत दी जानी चाहिए।

इस प्रश्न का उत्तर दी गई सजा के सापेक्ष होना चाहिए। जब कर्मचारी को बर्खास्त कर दिया जाता है या सेवा से हटा दिया जाता है और कर्मचारी को जांच रिपोर्ट न दिये जाने के कारण जांच खत्म कर दिया जाता है, तो कुछ मामलों में जांच रिपोर्ट न करने से उसे गंभीर रूप से पूर्वाग्रह हो सकता है जबकि अन्य मामलों में अन्तिम रूप से उसको दी गयी सजा पर इससे कोई फर्क नहीं पड़ सकता है। अतः सभी मामलों में पूर्व वेतन के साथ कर्मचारी की बहाली का आदेश देना न्याय प्रणाली को मशीनीकृत करना है। युक्तियुक्त अवसर सिद्धांत और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों को विधि के शासन को बनाए रखने और किसी व्यक्ति को उसके न्यायपूर्ण अधिकारों की पुष्टि करने में मदद करने के लिए विकसित किया गया है। इन सिद्वान्त को सभी अवसरों न तो मंत्रों की तरह आह्वान कर सकते हैं न ही कर्मकाण्ड़ की तरह प्रयोग कर सकते हैं। चाहे कर्मचारी को रिपोर्ट न दिये जाने का

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

कारण वास्तव में उसके साथ पूर्वाग्रह कारित पक्षपात हुआ है अथवा नहीं, इसको प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार किया जाना चाहिए। इसलिए, रिपोर्ट प्रस्तुत करने के बाद भी, कोई अलग परिणाम नहीं निकलेगा, यदि कर्मचारी को कार्य पर बहाल करने और सभी अनुषांगिक लाभ दिलाने को अनुज्ञात किया जाता है तो न्याय विकृत हो जाएगा। इससे बेईमान और दोषी पुरस्कृत हो जाएगा और इस प्रकार न्याय की अवधारणा को अतार्किक और उत्तेजक सीमाओं तक चली जाएगी। इससे 'प्राकृतिक न्याय के अप्राकृतिक विस्तार' हो जाएगा जो अपने आप में न्याय विरोधी है।

31. अतः, उन सभी मामलों में जहां जांच अधिकारी की रिपोर्ट अनुशासनात्मक कार्यवाही में दोषी कर्मचारी को नहीं दी जाती है और यदि ऐसी जांच रिपोर्ट उस कर्मचारी को अदालत/ट्रिब्यूनल में आने से नहीं प्राप्त हुई है तो न्यायालय और न्यायाधिकरण रिपोर्ट की प्रति पीड़ित कर्मचारी को दिलवाया जाएगा और कर्मचारी को यह बताने का अवसर प्रदान करेगा कि कैसे जांच रिपोर्ट न दिये जाने से उसके साथ पूर्वाग्रह कारित हुआ। यदि पक्षकारों को सुनने के उपरान्त, न्यायालय/ट्रिब्यूनल इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि रिपोर्ट नहीं दिये जाने से अन्तिम निष्कर्ष और और सजा में कोई अन्तर नहीं पड़ता है, तो न्यायालय/ट्रिब्यूनल को दण्ड़ादेश में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। न्यायालय /ट्रिब्यूनल को यांत्रिक रूप से इस आधार पर दण्ड़ादेश को अपास्त नहीं करना चाहिए कि जांच रिपोर्ट नहीं दिया गया था जैसा कि दुर्भाग्यवश वर्तमान में किया जा रहा है। अदालतों को शॉर्ट कट से बचना चाहिए। चूंकि यह वही न्यायालय/ट्रिब्यूनल हैं जो उन प्रश्न पर अपने न्यायिक विवेक को लागू कर और दण्ड़ादेश को अपास्त करने या न करने के कारण बताये, (और कोई आंतरिक अपीलीय या पुनरीक्षण प्राधिकारी नहीं), ऐसी स्थिति में यह नहीं कहा जा सकता है कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत का उल्लंघन हुआ और सुनवाई का अवसर नहीं दिया गया है। यह केवल तभी होता है जब न्यायालय/अधिकरण यह पाता है कि रिपोर्ट प्रस्तुत करने से उस मामले के निष्कर्ष में अंतर आ जाता कि उस दंण्ड़ादेश को न्यायालय
को अपास्त कर देना चाहिए।

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

32. बी. करुणाकर (सुप्रा) का अनुसरण इस न्यायालय द्वारा हरियाणा वित्तीय निगम और अन्य बनाम 21. बी. करुणाकर [(1993) 4 एस.सी.सी. 727] में निर्धारित अनुपात से यह पूर्णरूपेण स्पष्ट है कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत जांच अधिकारी से अपेक्षा करता है कि वह जांच रिपोर्ट की एक प्रति दोषी व्यक्ति को उपलब्ध कराये यदि जांच अधिकारी अनुशासनात्मक प्राधिकरण से भिन्न है। जांच अधिकारी की रिपोर्ट के जांच रिपोर्ट न दिया जाना स्पष्ट करता है कि प्राकृतिक न्याय का उल्लंघन हुआ है। लेकिन यह भी उतना ही स्पष्ट है कि जांच अधिकारी की एक रिपोर्ट की आपूर्ति करने में विफलता के कारण कार्यवाही को शून्य और शून्य घोषित किया जाएगा और सजा का आदेश गैर स्था और अप्रभावी होगा। दोषी कर्मचारी न्यायालय से प्रार्थना कर साबित करे कि ऐसी रिपोर्ट के नहीं दिये जाने से पूर्वाग्रह कारित हुआ था और न्याय विफल हो गया था। यदि वह उस बिंदु पर अदालत को संतुष्ट करने में असमर्थ है, तो दण्डादेश स्वतः अपास्त हो जाएगा।"
(प्रभाव वर्धित)

33. यहां यह उल्लेख करना आवश्यक है कि न्यायालय या ट्रिब्यूनल निर्धारित करे कि पूर्वाग्रह कारित हुआ है अथवा नहीं, न कि एकपक्षीय तथ्यों का मूल्यांकन कर कोई प्राधिकारी। इसकी अच्छे से व्याख्या पश्चातवर्ती निर्णय धर्मपाल सत्यपाल लिमिटेड बनाम उपायुक्त केंद्रीय उत्पाद शुल्क, गौहाटी और अन्य (2015) 8 एस.सी.सी. 519 के मामले में किया गया है, जिसमें इस न्यायालय ने कई निर्णय निर्धारित करने के उपरान्त निम्नलिखित निष्कर्ष निकालाः

38. लेकिन यह मामले का अंत नहीं है। जबकि सुने जाने के सिद्धान्त के तहत विधि ऊपर उल्लिखित तरीके से विकास किया है उसी समय न्यायालय ने भी बार–बार टिप्पणी किया है कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत बहुत लचीले सिद्धांत हैं। इसको सीधे तौर पर लागू नहीं किया जा सकता है। यह सब उस पर निर्भर करता है जिस प्रकार से कार्य किया गया है और जिस सीमा तक किसी व्यक्ति के प्रभावित होने की संभावना है। इस कारण से कुछ परिस्थितियों में उक्त सिद्धान्तों के लिए कतिपय अपवादों को लागू किया गया है। जैसे अदालतों ने माना है कि किसी व्यक्ति को प्रतिनिधित्व करने की अनुमति देना पर्याप्त होगा और सभी मामलों में मौखिक सुनवाई आवश्यक नहीं हो सकती है,तथापि

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

कुछ मामलों में, मामले की प्रकृति के आधार पर, न केवल पूर्ण रूप से मौखिक सुनवाई लेकिन गवाहों की जिरह को भी प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का एक आवश्यक अंग माना जाता है।

इसी तरह, अनुशासनात्मक कार्रवाई के तहत माध्यम से बड़ी सजा से संबंधित सेवा मामलों में , यह अपेक्षा और भी सख्त है और पूर्ण सुनवाई का अधिकार वैधानिक नियमों के तहत भी उपबंधित किया गया है। दूसरी ओर, उन मामलों में जहां आरोप स्वीकृत हैं, भले ही ऐसी कोई औपचारिक जांच नहीं की गयी है फिर भी इस प्रकार स्वीकृति के आधार पर सजा को बरकरार रखा गया है। यह इस कारण से है, कुछ परिस्थितियों में, कि बाद की निर्णायक सुनवाई पर भी अनुमति प्रदान की जाती है। इसके अतिरिक्त , अदालतों ने माना है कि कुछ परिस्थितियों में प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों को समय , स्थान, आशंकित खतरे आदि जैसे विविध कारकों के कारण भी अपवर्जित किया जा सकता है।

39. वर्तमान मामले में इन पहलुओं से हमारा कोई सरोकार नहीं है क्योंकि यह विषय कार्रवाई करने से पूर्व नोटिस दिये जाने से संबंधित है। इस बात पर जोर देते हुए कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों को सीधे तौर पर लागू नहीं किया जा सकता है , उपरोक्त उदाहरण दिए गए हैं। हमने प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन करने के न्यायशास्त्रीय आधार पर प्रकाश डाला है जो प्रक्रियात्मक निष्पक्षता के सिद्धांत, सामान्य सामाजिक लक्ष्यों की ओर ले जाने वाले परिणाम की सटीकता इत्यादि पर आधारित हैं, फिर भी, ऐसी परिस्थितियां हो सकती हैं जिनमें किसी कारण से –शायद क्योंकि उस व्यक्ति के विरूद्ध वह साक्ष्य पूरी तरह से मजबूर करने वाला माना जाता है – ऐसा माना जाता है कि निष्पक्ष सुनवाई से 'कोई फर्क नहीं पड़ेगा'– जिसका अर्थ है कि ऐसी सुनवाई उस निर्णय में न्यायालय ने जो अंतिम निष्कर्ष निकाला है उसमें फेरबदल नहीं करेगी –फिर ऐसी सुनवाई को करने की कोई विधिक बाध्यता नहीं है। मल्लोच बनाम एबरडीन कॉर्पन [(1971) 1 डब्ल्यू.एल.आर. 1578] के मामले में लॉर्ड विल्बरफोर्स ने ऐसे दृष्टिकोण का समर्थन कर कहा जो निम्नवत हैः (डब्ल्यू.एल.आर. पृष्ठ संख्या 1595)"... प्रक्रिया का

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

उल्लंघन न्यायालयों में किसी उपचार के तौर उठाया नहीं जा सकता है, जब तक कि इसके पीछे कोई ऐसा तत्व न जो विफल हो चुका है। अदालत व्यर्थ काम नहीं करती है।" इन टिप्पणियों का अवलम्ब लेकर ब्रैंडन एलजे ने सिनमंड बनाम ब्रिटिश एयरपोर्ट अथॉरिटी [(1980) 1 डब्ल्यू.एल.आर. 582] के मामले में कहा किः (डब्ल्यू.एल.आर. पृष्ठ 593)" ऐसी स्थितियों में, निष्पक्ष प्रक्रियाएं कोई उद्देश्य पूरा नहीं करती हैं क्योंकि उस व्यक्ति के साथ इस तरह के उपचार के बिना 'सही' परिणाम प्राप्त किया जा सकता है।

40. इस संबंध में, हमें अन्य अपवाद पर ध्यान देने की आवश्यकता है जिसे न्यायालयों द्वारा पूर्वोक्त सिद्धांत पर उत्कीर्ण किया गया है। यदि न्यायालय द्वारा भी यह पाया जाता है कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन किया गया है, न्यायालयों ने माना है कि यह आवश्यक नहीं है कि कार्रवाई को समाप्त कर दिया जाए और इस मामले को उन प्राधिकारियों के पास वापस भेजा जाए जो उन मामलों में प्रक्रियात्मक अपेक्षाओं का अनुपालन करने के उपरान्त नये सिरे से निर्णय लें जहां पर उस व्यक्ति के विरूद्ध पूर्वाग्रह कारित हुआ है जिसे सुनवाई का अवसर नहीं प्रदान किया गया है। इसलिए, प्राकृतिक न्याय के अनुसार प्रत्येक उल्लंघन से यह निष्कर्ष नहीं निकल सकता है कि जो आदेश पारित किया गया है वह हमेश शून्य होता है। आदेश की वैधता 'पूर्वाग्रह' के आधार पर तय करना होगा। अंतिम परीक्षण हमेशा वही रहती है जैसे पूर्वाग्रह का परीक्षण या निष्पक्ष सुनवाई का परीक्षण।

xxx xxx xxx

42. जहां तक सही वहां तक ठीक है। हालाँकि, श्री सोराबजी ने जिस महत्वपूर्ण प्रश्न उठाया वह यह है कि क्या यह निर्णय करने वाले प्राधिकारी पर है कि वह प्राकृतिक न्याय के सिद्धान्तों को इस आधार पर छोड़ दे कि सुनवाई का अवसर देने से निर्णय में कोई खास अन्तर नहीं पड़ेगा? इसे अन्यथा लेने के लिए, क्या प्रशासनिक प्राधिकरी स्वयं यह तय करके नोटिस दिये जाने की आवश्यकता को छोड़ सकता है कि उस व्यक्ति को कोई पूर्वाग्रह कारित नहीं होगा जिसके विरूद्ध कार्रवाई शुरू किया गया है? उत्तर नकारात्मक होगा। प्राधिकारी को इस आधार पर प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के अनुपालन की अवज्ञा

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

करने की अनुमति नहीं है कि यदि सुनवाई का अवसर प्रदान किया गया होता तो कोई उपयोगी परिणाम नहीं निकलता। सुनवाई का अवसर उस उद्देश्य की पूर्ति करेगा या नहीं इस बात को बड़े स्तर पर विचारित किया जाना चाहिए और इसका अनुमान प्राधिकारी द्वारा नहीं लगाया जा सकता है।

यह अंग्रेजी न्यायालय द्वारा वर्ष 1943 में जनरल मेडिकल काउंसिल बनाम स्पेकमैन, 1943 ए.सी. 627 में अभिनिर्णीत किया गया। इस न्यायालय ने बोर्ड ऑफ हाई स्कूल एंड इंटरमीडिएट एजुकेशन बनाम चित्रा श्रीवास्तव 1970 (1) एस.सी.सी. 121 के मामले में भी यही बात दोहरायी जैसा निम्नलिखित शब्दों से स्पष्ट हैः (एस.सी.सी. पृष्ठ 123, पैरा 7)

7. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री सीबी अग्रवाल का तर्क है कि तथ्यों पर विवाद नहीं हैं और यह स्पष्ट है कि यदि बोर्ड ने याचिकाकर्ता पर कारण बताओ नोटिस दिया होता तो कोई उपयोगी उद्देश्य नहीं निकलता। उनका कहना है कि इन परिस्थितियों के दृष्टिगत बोर्ड के लिए कारण बताओ नोटिस जारी करना आवश्यक नहीं था। हम इस तर्क को स्वीकार करने में असमर्थ हैं। क्या जुर्माना लगाने से पहले कारण बताओ नोटिस जारी करने के लिए किसी मामले विशेष में कोई कर्तव्य उत्पन्न होता है, यह प्राधिकरण की संतुष्टि पर निर्भर नहीं करता है कि दंडित किए जाने वाले व्यक्ति को कोई बचाव का अवसर नहीं मिला है, लेकिन उस पर जो आदेश पारित किया जाना जाना प्रस्तावित है।'

43. पूर्वोक्त प्रतिपादित विधि के दृष्टिगत, श्री सोराबजी ने जो तर्क दिया है वह भी सही हो कि प्राधिकारी इस अनुमान पर प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों की आवश्यकता इस आधार पर नहीं त्याग सकता है कि अपीलार्थी के साथ कोई पूर्वाग्रह कारित होने वाला नहीं है क्योंकि आर.सी. तंबाकू [(2005) 7 एससीसी 725] के मामले में पारित निर्णय ने अपीलकर्ता के लिए सारे रास्ते बंद कर दिये हैं।

44. साथ ही, इस बात से भी इनकार नहीं किया जा सकता है कि जहां तक न्यायालयों का प्रश्न है, वे इस बात पर विचार करने के लिए सशक्त हैं कि मामले को वापस लौटाने से क्या कोई उद्देश्य सिद्ध होगा, यह ध्यान में रखते हुए कि क्या जिस व्यक्ति के विरूद्ध

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

कार्यवाही किया गया है उसको पूर्वाग्रह कारित हुआ है। इसे ई.सी.आई.एल. में ही निम्नलिखित शब्दों में स्पष्ट किया गया थाः (एस.सी.सी. पृष्ठ 758, पैरा 31)

31. अतः, उन सभी मामलों में जहां जांच अधिकारी की रिपोर्ट अनुशासनात्मक कार्यवाही में दोषी कर्मचारी को प्रदान नहीं की जाती है वहां अदालतों और न्यायाधिकरणों को रिपोर्ट की प्रति दुःखी कर्मचारी को दिलवाना चाहिए यदि न्यायालय/ट्रिब्यूनल आने से पूर्व उस कर्मचारी ने इस जांच रिपोर्ट को नहीं प्राप्त है और उस कर्मचारी को यह दिखाने का अवसर नहीं मिला है जांच रिपोर्ट नहीं दिये जाने से उसको पूर्वाग्रह कारित हुआ। यदि पक्षों को सुनने के बाद, अदालत/न्यायाधिकरण इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि रिपोर्ट नहीं दिये जाने के कारण अन्तिम निष्कर्ष और जो दण्ड़ दिया गया उस पर कोई अन्तर नहीं आएगा तो अदालत/ट्रिब्यूनल को दण्ड़ादेश में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। अदालत/ट्रिब्यूनल को यांत्रिक

रूप से इस आधार पर दण्ड़ादेश को अपास्त नहीं करना चाहिए कि रिपोर्ट प्रस्तुत नहीं किया गया था जैसा कि वर्तमान में अफसोसजनक रूप से किया जा रहा है। अदालतों को शॉर्ट कट से बचना चाहिए। चूंकि यह वही अदालतें/ट्रिब्यूनल हैं जो उन प्रश्न पर अपने न्यायिक विवेक को लागू करेंगे और दण्ड़ादेश को अलग करने या न करने के अपने कारण देंगे, (और कोई आंतरिक अपीलीय या पुनरीक्षण प्राधिकारी नहीं), तो न तो प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत कोई उल्लंघन होगा और न ही युक्तियुक्त अवसर का प्रत्याख्यान। यह केवल तभी है जब अदालत/ट्रिब्यूनल को पाता है कि रिपोर्ट प्रस्तुत करने से मामले में परिणाम में अंतर हो जाएगा तब न्यायालय को दण्ड़ादेश को अपास्त कर देना चाहिए।"

45. पूर्वोक्त सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, जब हमें पता चले कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन हुआ है, तो हमें एक और प्रश्न पर विचार करना होगा कि क्या अपीलकर्ता को कारण बताओ नोटिस जारी करने के उपरान्त मामले उस प्राधिकारी के पास नये सिरे से वसूली योग्य राशि की मांग करने में किसी उद्देश्य की पूर्ति होगी। वर्तमान मामले के तथ्यों में, हम पाते हैं कि आर.सी. तंबाकू [(2005) 7 एस.सी.सी. 725] में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित विधि के संबंध में ऐसी कार्यवाही का कोई मतलब नहीं है।"

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

(प्रभाव वर्धित)

34. स्टेट बैंक ऑफ पटियाला और अन्य बनाम एस.के. शर्मा (1996) 3 एस.सी.सी. 364 में, इस न्यायालय की एक खंडपीठ ने 'पर्याप्त अवसर' और 'बिल्कुल भी अवसर नहीं' के बीच अंतर किया, और कहा कि 'पूर्वाग्रह' का अपवाद विशेष रूप से आगे के मामलों में लागू होता है। यह निर्णय कानून के प्रक्रियात्मक और मौलिक प्रावधानों की भी बात करता है जो प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों को मूर्त रूप देते हैं, जब प्रकृतिक न्याय का उल्लंघन किया जाता है, तो इस उल्लंघन से वादकारी को जो पूर्वाग्रह कारित हुआ उससे उसको निम्नवत राहत प्रदान किया जाना चाहिएः

32. अब, पूर्ववर्ती पैरा में जो हमने उदाहरण दिया है उस पर आते हैं, तो क्या दण्ड़ादेश और उप–खंड (iii) के पूर्वोक्त उल्लंघन के आधार पर पूरी जांच को अपास्त करना न्याय हित में होगा या निषेध होगा? हमारी राय में यह न्याय देने से इंकार करना होगा। न्याय का अर्थ है दोनों पक्षों के बीच न्याय करना। न्याय हित में समान रूप से अपेक्षा होती है कि दोषियों को दंडित किया जाना चाहिए और तकनीकी और अनियमितताएं जो न्याय की विफलता का कारण नहीं बनती है उनको न्याय को विफल करने के लिए अनुमति नहीं प्रदान किया जाता है। प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत न्याय अर्थ न्याय के उद्देश्यों की प्राप्ति है। उन्हें बहुत विपरीत उद्देश्य प्राप्त करने के लिए विकृत नहीं किया जा सकता है। यह एक प्रति–उत्पादक कार्य होगा।

33. हम उपरोक्त चर्चा से उत्पन्न सिद्धांतों को संक्षेप में प्रस्तुत कर सकते हैं। (यह सिद्धान्त किसी भी तरह से पूर्ण नहीं है और इसमें कर्मचारी के विरूद्ध नियोक्ता द्वारा अनुशासनात्मक जांच कर जो दण्ड़ादेश दिया गया है यह उसके दृष्टिगत विकसित हुआ है):

(1) नियमों/विनियमों/वैधानिक प्रावधानों का उल्लंघन कर अनुशासनात्मक/विभागीय जांच के परिणामस्वरूप किसी कर्मचारी पर दंड अधिरोपित कर जो आदेश पारित किया वह स्वतः नहीं समाप्त हो जाएगा। न्यायालय या ट्रिब्यूनल को यह जांच करनी चाहिए कि (क) जिस प्रावधान उल्लंघन किया गया है क्या उसकी प्रकृति मौलिक है या (ख) क्या इसकी प्रकृति प्रक्रियात्मक है।

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

(2) मौलिक उपबंध का यथापूर्वोक्त के साथ अनुपालन करना होगा और मौलिक अनुपालन का सिद्धांत या पूर्वाग्रह का परीक्षण ऐसे मामलों में लागू नहीं होगा।

39 (3) प्रक्रियात्मक प्रावधान के उल्लंघन की दशा में निम्नलिखित स्थिति हैः प्रक्रियात्मक प्रावधान आमतौर पर दोषी अधिकारी/कर्मचारी को युक्तियुक्त और पर्याप्त अवसर प्रदान करने के लिए होते हैं। वे आम तौर पर उनके हित में समझी जाती है। किन्ही और प्रत्येक प्रक्रियात्मक प्रावधान का उल्लंघन स्वतः जांच या पारित आदेश को दूषित नहीं करता है। "सूचना का न दिया जाना", "अवसर का न प्रदान किया जाना" और "सुनवाई का अवसर न दिया जाना" प्रवर्गों के अधीन आने वाले मामलों के सिवाय, प्रक्रियात्मक उपबंध के अतिक्रमण की शिकायत को पूर्वाग्रह के दृष्टिकोण से जांच किया जाना चाहिए, अर्थात्, क्या इस प्रकार का उल्लंघन दोषी अधिकारी/कर्मचारी को उचित और प्रभावी रूप से अपना बचाव करने में पूर्वाग्रह कारित हुआ है। यदि यह पाया जाता है कि उसे इतना पूर्वाग्रहित कारित हुआ है, तो पूर्वाग्रह को उपचारित करने के लिए समुचित आदेश पारित किया जाना चाहिए जिसमें जांच और/या दण्ड़ादेश को अपास्त किया जाना सम्मिलित है। यदि इससे कोई पूर्वाग्रह कारित नहीं हुआ है तो स्पष्ट है किसी भी हस्तक्षेप की मांग नहीं किया जा सकता है। इस संबंध में, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि कुछ प्रक्रियात्मक प्रावधान हो सकते हैं जिनकी प्रकृति मौलिक है और जिनका उल्लंघन स्वयं पूर्वाग्रह का प्रमाण है। न्यायालय ऐसे मामलों में पूर्वाग्रह का साक्ष्य प्रस्तुत करने पर जोर नहीं दे सकता है। जैसा कि उस निर्णय में बताया गया है, ऐसे मामले पर विचार करें जहां प्रावधान स्पष्ट रूप से उपबंध करता है कि नियोक्ता/सरकार का साक्ष्य लेने के उपरान्त कर्मचारी को अपना साक्ष्य रखकर बचाव का अवसर प्रदान किया जाएगा, और इस मामले में दोषी कर्मचारी द्वारा मांग किये जाने पर भी जांच अधिकारी वह अवसर नहीं देता है। पूर्वाग्रह स्वयं में स्पष्ट है। इस मामले में जो पूर्वाग्रह कारित हुआ उसके साक्ष्य मांग करने की आवश्यकता नहीं है। पुनः यह परीक्षण एक प्रकार का पूर्वाग्रह है जैसे क्या उस व्यक्ति को सभी चीजों पर विचार कर निष्पक्ष सुनवाई का अवसर मिला है। अब,यदि कोई इतना झुका है तो इसी दृष्टिकोण को निर्देशकीय और अनिवार्य प्रावधानों के दृष्टिकोण से भी देखा जा सकता है। इसके तहत जिस सिद्धांत की चर्चा किया गया है (4) इसी

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

दृष्टिकोण को लेने का अन्य तरीका दिया गया है अलग या अलग सिद्धांत नहीं है। (4) (क) प्रक्रियात्मक प्रावधान के इस मामले में, जो आज्ञापक स्वरूप का नहीं है, इस सिद्धान्त के भंग को उस बिन्दु से जांच किया जाना चाहिए जहां से इसका अनुपालन आवश्यक है। वही होगा जो हो सकता है, किसी प्रावधान के उल्लंघन में जो आदेश पारित किया गया केवल वहां अपास्त किया जा सकता है जहां इस प्रकार भंग से दोषी कर्मचारी को पूर्वाग्रह कारित हुआ है।

(ख) प्रक्रियात्मक उपबंध के अतिक्रमण के मामले में, जो आज्ञापक स्वरूप का है, यह पता लगाया जाना चाहिए कि क्या उपबंध उस व्यक्ति के हित में परिकल्पित किया गया है जो लोकहित में कार्यवाही करता है। यदि यह पहले वाला हो,तो यह देखा जाना चाहिए कि क्या दोषी अधिकारी ने अभिव्यक्त रूप से या अपने आचरण द्वारा उक्त अपेक्षा को छोड़ दिया है। यदि पाया जाता है कि उसने इसे छोड़ दिया है, तो दण्ड़ादेश को उक्त उल्लंघन के आधार पर अपास्त नहीं किया जा सकता है। दूसरी ओर, यदि यह पाया जाता है कि दोषी अधिकारी/कर्मचारी ने इसे छोड़ा नहीं है या यह कि वह प्रावधान उसके द्वारा छोड़ा नहीं जा सकता था, तो बी. करुणाकर [(1993) 4 एस.सी.सी. 727 में संविधान पीठ द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण को ध्यान में रखकर न्यायालय या ट्रिब्यूनल को उचित निर्देश देना चाहिए (जिसमें दण्ड़ादेश का
अपास्त किया जाना शामिल है)। अंतिम जांच हमेशा समान होता है, अर्थात, पूर्वाग्रह अथवा निष्पक्ष सुनवाई का परीक्षण, जैसा कि इसे कहा जा सकता है।

(5) जहां जांच किसी नियम/विनियम/वैधानिक प्रावधानों द्वारा शासित नहीं है और एकमात्र दायित्व प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन करना है – या, उस मामले के लिए, जहां भी ऐसे सिद्धांतों को आदेश/कार्रवाई के स्वभाव और प्रभाव द्वारा निहित किया जाता है–न्यायालय या न्यायाधिकरण को प्राकृतिक न्याय के कुल उल्लंघन (सुनवाई के अधिकार का नियम) और उक्त नियम के एक पक्ष के उल्लंघन के बीच अंतर करना चाहिए, जैसा कि निर्णय के मुख्य भाग में बताया गया है। दूसरे शब्दों में, "कोई अवसर नहीं" और पर्याप्त अवसर नहीं, अर्थात "सूचना नहीं"/"सुनवाई नहीं" और "निष्पक्ष सुनवाई नहीं" के बीच अंतर किया जाना चाहिए। (क) पहले वाले मामले में जो आदेश

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

पारित किया वह निस्संदेह अमान्य होगा (कोई इसे 'शून्य' या अशक्तता कह सकता है यदि कोई चुनता है)। ऐसे मामलों में, आम तौर पर, प्राधिकारी को विधि के अनुसार कार्यवाही करने के लिए स्वतंत्रता होगी, अर्थात, उक्त नियम के अनुसार (सुनवाई का अधिकार)। (बी) लेकिन बाद के मामले में, उल्लंघन के प्रभाव (सुनवाई के अधिकार के नियम के एक पक्ष का) को कारित पूर्वाग्रह के शुरुआती बिन्दु से जांच करना होगा; दूसरे शब्दों में, न्यायालय या ट्रिब्यूनल को जो देखना है वह यह है कि क्या परिस्थितियों की समग्रता में, दोषी अधिकारी/कर्मचारी ने निष्पक्ष सुनवाई का अवसर मिला है अथवा नहीं और जो आदेश पारित किये जाएंगे वह उक्त प्रश्न के उत्तर पर निर्भर करेंगे। [यह स्पष्ट किया जाता है कि यह सिद्धांत (सं. 5) पक्षपात के विरुद्ध नियम के मामले में लागू नहीं होता है, वह परीक्षण जिसकी ओर अन्यत्र अवधारित किया गया है।]

(6) सुनवाई के अधिकार (प्राकृतिक न्याय का प्राथमिक सिद्धांत) के नियम को लागू करते समय न्यायालय/न्यायाधिकरण/प्राधिकरण को उक्त नियम के अंतर्निहित अंतिम और अधिभावी उद्देश्य को हमेशा ध्यान में रखना चाहिए जैसे न्यायालय निष्पक्ष सुनवाई सुनिश्चित करे और यह सुनिश्चित करे कि न्याय विफल नहीं हुआ है। यह वह उद्देश्य है जो उनके सामने आने वाली विभिन्न स्थितियों में उस नियम को लागू करने में उनका मार्गदर्शन करना चाहिए।

(7) ऐसी परिस्थितियां हो सकती हैं जहां राज्य या जनता के हित सुने जाने के अधिकार के नियम को सीमित कर सकते हैं। ऐसी परिस्थितियों में, न्यायालय को प्राकृतिक न्याय की अपेक्षा के साथ सार्वजनिक/राज्य हित को संतुलित करना होगा और एक समुचित निर्णय करना होगा।"

35. एम.सी. मेहता बनाम भारत संघ और अन्य (1999) 6 एस.सी.सी. 237 के मामले में, जगमोहन (उपरोक्त) के मामले में निर्धारित "स्वीकृत और निर्विवाद तथ्य" अभिव्यक्ति, इस पर दिलचस्प अन्तर कि क्या पूर्वाग्रह के "मामूली साक्ष्" या "वास्तविक संभावना" को दिखाना आवश्यक है, या यह तथ्य कि यह एक "खुला और बंद मामला" है, सभी पर विस्तार से चर्चा की गई थी जो निम्नानुसार हैः

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

16. न्यायालयों को प्राकृतिक न्याय के नियमों के उल्लंघन और राहत देने से इनकार करने के न्यायालय के विवेक के बीच कभी–कभी दुविधा का सामना नहीं करना पड़ता है, भले ही प्राकृतिक न्याय के नियमों का उल्लंघन किया गया हो, इस आधार पर कि प्रभावित पक्ष को कोई वास्तविक पूर्वाग्रह कारित नहीं हुआ है।

xxx xxx xxx

22. इस विवाद के अंतिम पक्षों पर जाने से पूर्व, हम यह बताना चाहेंगे कि प्राकृतिक न्याय के उल्लंघन से संबंधित मामले वहां भी होते हैं जहां सभी तथ्यों को स्वीकार नहीं किया जाता है या सभी पर विवाद नहीं होता हैं। उन मामलों के संदर्भ में अनेक विचारणीय विधिक मामले और साहित्य है जो इस बात से संबंधित हैं कि क्या उपचार प्रदान करने से इनकार किया जा सकता है, भले ही न्यायालय यह सोचती हो कि आवेदक का मामला 'वास्तविक विषय' में से नहीं आता है या उसकी सफल होने कोई पर्याप्त संभावना नहीं है या विपरीत परिणाम नहीं निकेलगा, भले ही प्राकृतिक न्याय के सिद्धान्त का पालन किया जाए। देखेंः मालोच बनाम एबरडीन कॉर्पन [(1971) 1 डब्ल्यू.एल.आर. 1578] (लॉर्ड रीड और लॉर्ड विल्बरफोर्स के अनुसार), ग्लिन बनाम कील विश्वविद्यालय [(1971) 1 डब्ल्यू.एल.आर. 487], सिनमोंड बनाम ब्रिटिश एयरपोर्ट अथॉरिटी [(1980) 1 डब्ल्यू.एल.आर. 582] और अन्य मामले जहां ऐसा दृष्टिकोण प्रतिपादित किया गया है।

इस मत का नवीनतम परिवर्धन आर. बनाम ईलिंग मजिस्ट्रेट न्यायालय, भूतपूर्व पी. फन्नारान [(1996) 8 एडमन एल. आर. 351,358] (ए.डी.एम. एन. एल. आर.(पृष्ठ 358) (देखेंः डी स्मिथ, अनुपूरक पृष्ठ 89) (1998) जहां स्ट्रॉटन, एल. जे. ने अभिनिर्धारित किया कि "संदेह से परे होना स्पष्ट" होना चाहिए कि परिणाम भिन्न होता लॉर्ड वूल्फ इन लॉयड बनाम मैकमोहन [(1987) 2 डब्ल्यू. एल. आर. 821,862] (पृष्ठ 862 पर डब्ल्यू. एल. आर.) ने भी प्राकृतिक न्याय के भंग के कतिपय मामलों में विवेकाधिकार के प्रयोग से इनकार नहीं किया है। तथापि, मैककार्थी बनाम ग्रांट [1959 एन जेड एल आर 1014] मामले में न्यूजीलैण्ड का न्यायालय आधे निष्कर्ष पर पहुंच जाता है जब वह कहता है कि (पक्षपात के मामले में) आवेदक के लिए यह दर्शित करना

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

पर्याप्त है कि पक्षपात की "वास्तविक संभावना है–निश्चितता नहीं" दूसरी तरफ, गार्नर एडमिनिस्ट्रेटिव लॉ (8 वीं संस्करण, 1996, पृष्ठ 271–72) का कहना है कि परिणाम अलग होता इसका थोड़ा सा सबूत पर्याप्त है। तर्क के दूसरे पक्ष में, हमारे पास रिज बनाम बाल्डविन [1964 एसी 40], मेगरी, जे. इन जॉन बनाम रीस [(1969) 2 डब्ल्यूएलआर 1294] के अलावा यह कहते हुए कि हमेशा "खुले और बंद मामले" होते हैं और पूर्वाग्रह के सबूत का कोई पूर्ण नियम निर्धारित नहीं किया जा सकता है। गुण अदालत के लिए नहीं बल्कि विचार करने के लिए प्राधिकरण के लिए हैं। एक्नर, जे. ने कहा है कि "बेकार औपचारिकता सिद्धांत" एक खतरनाक है और हालांकि, असुविधाजनक, प्राकृतिक न्याय का पालन किया जाना चाहिए। उनके आधिपत्य ने देखा कि "सुविधा और न्याय अक्सर बोलने की शर्तों पर नहीं होते हैं"। हाल ही में लॉर्ड बिंगहाम ने छह कारण बताकर आर. वी. टेम्स वैली पुलिस फोर्सेज के चीफ कांस्टेबल, एक्स पी कॉटन [1990 आई.आर.एल.आर. 344] के मामले में "अनुपयुक्त औपचारिकता" सिद्धांत की आलोचना किया है। (उनके द्वारा विरचित लेख "क्या सार्वजनिक विधि उपचार विवेकाधीन होना चाहिए" 1991 पी. एल. पी. 64 को भी देखें:)

"अनुपयुक्त औरचारिकता का सिद्धान्त" विस्तृत और प्रभावी आलोचना काफी पहले कनाडा के प्रो. डी. एच. क्लार्क द्वारा "नेचुरल जस्टिस सबस्टैंस एण्ड़ शैड़ो" प्रतिपादित किया गया है जिसमें उन्होंने कहा कि मलोच (देखिए 1975 पी. एल., पृष्ठ 27–63) यह प्रतिवाद करते हुए कि मल्लोच [(1971) 1 डब्ल्यू. एल. आर. 1578] और ग्लिन [(1971) 1 डब्ल्यू. एल. आर. 487] का गलत विनिश्चय किया गया था। फौल्क्स (प्रशासनिक विधि, 8 वां संस्करण, 1996, पृष्ठ 323), क्रेग (प्रशासनिक विधि, तीसरा संस्करण पृष्ठ 596) और अन्य बताते है कि नीति–निर्णय करने वाले प्राधिकारी के विनिश्चय पर न्यायालय को पूर्वाग्रह नहीं करना चाहिए, डी स्मिथ (5 वां संस्करण, 1994, प्रस्तर 10.031 से 10.036) में कहते हैं कि हलांकि अब भी न्यायालय किसी एक दृष्टिकोण पर केंद्रित नहीं है भले ही न्यायालय के पास विवेकाधिकार की शक्ति हमेशा रही है। वेड (प्रशासनिक विधि, 5 वां संस्करण, 1994, पृष्ठ 526–30) कहते है कि निरर्थक रिट जारी नहीं की जा सकती है, निर्णय की प्रकृति के अनुसार अंतर किया जाना है। इस प्रकार, स्वीकृत या निर्विवाद तथ्यों से संबंधित मामलों के अलावा अन्य मामलों

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

के संबंध में, इस मत में काफी अंतर है कि क्या आवेदक को यह साबित करने के लिए मजबूर किया जा सकता है कि परिणाम उसके पक्ष में आ जाए या उसे उस मामले के सार तत्व को साबित करना होगा या यदि वह सफलता की 'वास्तविक संभावना' साबित कर सकता है या यदि यदि सफल होना दुष्कर होता तो भी वह उपचार प्राप्त करने का हकदार है। तथापि, हम यह उल्लेख कर सकते हैं कि ऐसे मामलों में भी, जहां सभी तथ्य स्वीकार नहीं किए जाते हैं या विवाद से परे हैं, तो वहां पर्याप्त संगतता होता है कि न्यायालय अपने "विवेकाधिकार" का प्रयोग कर प्राकृतिक न्याय का पालन नहीं किए जाने पर भी, परमादेश, प्रतिषेध लेख, उत्प्रेक्षण या व्यादेश जारी करने से मना कर सकता है भले प्राकृतिक न्याय के सिद्धान्त कापालन नहीं किया गया है। हम यह भी कह सकते हैं कि स्टेट बैंक ऑफ पटियाला बनाम एसके शर्मा [(1996) 3 एस.सी.सी. 364], राजेंद्र सिंह बनाम म.प्र. राज्य [(1996) 5 एस.सी.सी. 460] ऐसे अन्य मामले भी हैं जहां है वैधानिक प्रावधानों के संबंध में सूचना अपेक्षित है तो उन मामलों के बीच अंतर किया जाना है जहां प्रावधान व्यक्तिगत लाभ के लिए है और जहां प्रावधान सार्वजनिक हित की रक्षा के लिए है। पूर्व मामले में, इसे माफ किया जा सकता है जबकि उत्तरार्द्ध के मामले में, इसे माफ नहीं किया जा सकता है.

23. हम "अनुपयुक्त औपचारिकता" के सिद्धांत की शुद्धता या अन्यथा पर कोई राय व्यक्त नहीं करना चाहते हैं और मामले को निर्णय के लिए किसी उपयुक्त मामले पर छोड़ देते हैं, क्योंकि, हमारे समक्ष जो मामला है, "स्वीकृत र निर्विवाद" तथ्य यह दिखाते हैं कि रिट पर अनुमति प्रदान करना व्यर्थ होगा जैसा कि न्यायमूर्ति चिन्नाप्पा रेड्डी ने किया है।

36. अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविंद्यालय और अन्य बनाम मसूर अली खान (2000) 7 एस.सी.सी. 529 के मामले में, पूर्वोक्त प्राधिकारियों पर अवलम्ब लिया गया, और जो उत्तर दिया गया वह यह था कि कोई पूर्ण नियम नहीं है, और प्रत्येक मामले के तथ्यों के आधार पर पूर्वाग्रह दर्शित किया जाना चाहिए जो इस प्रकार हैः"

24. यह सिद्धांत निर्धारित किया गया है कि प्राकृतिक न्याय के उल्लंघन के अलावा, पूर्वाग्रह को भी साबित किया जाना चाहिए। के एल त्रिपाठी बनाम भारतीय स्टेट बैंक [(1984) 1 एस.सी.सी. 43] के मामले में न्यायमूर्ति सब्यसाची मुखर्जी (जैसा कि वह

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

तब थे) ने यह सिद्धांत भी प्रतिपादित किया कि प्राकृतिक न्याय का उल्लंघन मात्र हीं नहीं बल्कि वास्तविक पूर्वाग्रह (सूचना न दिये जाने के अतिरिक्त) नोटिस) को साबित करना था। वेड्स एडमिनिस्ट्रेटिव लॉ (5 वें संस्करण, पृष्ठ 472–75) को उद्धृत करते हुए देखा गया जो इस प्रकार हैः (एस.सी.सी. पृष्ठ 58, प्रस्तर 31)"[।] यह संभव नहीं है कि कठोर नियम प्रतिपादित किये जाएं कब प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत किस क्षेत्र तक किस किस सीमा तक लागू किये जाते हैं। शिकायतकर्ता को अवश्य ही कुछ पूर्वाग्रह कारित हुआ होगा, प्राकृतिक न्याय के तकनीकी उल्लंघन के अलावा कोई ऐसी चीज मौजूद नहीं है। प्राकृतिक न्याय के सिद्धान्त की अपेक्षाएं उस मामले की तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर होनी चाहिए जैसे जांच की प्रकृति, वे नियम जिनके तहत ट्रिब्यूनल कार्यवाही कर रही है, वे विषयवस्तु जिसका निपटारा किया जाना है इत्यादि। इस न्यायालय ने तब से लगातार कई मामलों में पूर्वाग्रह के इस सिद्धांत को लागू किया है। उपरोक्त निर्णय और कई अन्य निर्णयों को स्टेट बैंक ऑफ पटियाला बनाम एसके शर्मा [(1996) 3 एस.सी.सी. 364] में विस्तृत रूप से संदर्भित किया गया है जिसमें समान दृष्टिकोण लिया गया है। उस मामले में, 'पूर्वाग्रह' के सिद्धांत का सविस्तार व्याख्या किया गया है। इस सिद्धांत को राजेंद्र सिंह बनाम म.प्र. राज्य [(1996) 5 एस.सी.सी. 460] 45 25 में पुनः दोहराया गया है। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि "अनुपयुक्त औपचारिकता" सिद्धांत एक अपवाद है। ऊपर निर्दिष्ट "स्वीकृत या निर्विवाद तथ्यों जिनसे केवल एकमात्र निष्कर्ष निकलता है" मामलों से इतर उन अन्य मामलों में उस सिद्धांत के लागू होने पर काफी बहस हुई है। इस सिद्धांत में प्रतिपादित विविध मत ऊपर उल्लिखित एम.सी. मेहता में न्यायालय द्वारा विस्तृत रूप से विचारित किया गया माना है। इस न्यायालय ने विभिन्न मामलों में न्यायमूर्ति लॉर्ड रीड, लॉर्ड विल्बरफोर्स, लॉर्ड वूल्फ, लॉर्ड बिंगहाम, मेगरी, और स्ट्रॉटन, एल.जे. इत्यादि द्वारा इंग्लैंड में विभिन्न निर्णयों में व्यक्त किए गए विचारों का सर्वेक्षण किया और प्रमुख लेखकों प्रोफेसर गार्नर, क्रेग, डी स्मिथ, वेड, डीएच क्लार्क इत्यादि द्वारा व्यक्त किए गए विचारों का भी सर्वेक्षण किया। उनमें से कुछ ने कहा है कि प्राकृतिक न्याय के सिद्वान्तों का उल्लंघन में पारित किये गये आदेशों को रद्द कर दिया जाना चाहिए अन्यथा अदालत इस मुद्दे पर पक्षपात करेगी। कुछ अन्य लोगों ने कहा है कि ऐसा कोई पूर्ण नियम नहीं है और पूर्वाग्रह को प्रकट किया जाना चाहिए। फिर भी, कुछ अन्य लोगों ने मीडिया

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

नियमों के माध्यम से लागू किया है। हम इस मामले में इन मुद्दों की गहराई पर जाना आवश्यक नहीं समझते हैं। अंतिम विश्लेषण में, यह किसी विशेष मामले के उन तथ्यों पर निर्भर हो सकता है। "

37. भारत संघ और अन्य बनाम आलोक कुमार (2010) 5 एस.सी.सी. 349 में, इस न्यायालय ने अति–तकनीकी दृष्टिकोण न लेकर निर्णीत किया कि पूर्वाग्रह वादी की आशंका मात्र नहीं होना चाहिए, बल्कि इससे पूर्वाग्रह कारित होने का निश्चित अनुमाान निकलना चाहिए जो प्राकृतिक न्याय के प्रतिषेध से अनुगमन तक चलता है, जो निम्नानुसार हैः

83. इससे पूर्व कुछ मामलों में इस न्यायालय ने यह विचार व्यक्त किया कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन अपने आप में एक पूर्वाग्रह था और किसी अन्य 'वास्तविक' पूर्वाग्रह को साबित करने की आवश्यकता नहीं है। वैधानिक नियमों के संबंध में प्रमुख दृष्टिकोण यह था कि अनिवार्य वैधानिक नियमों का उल्लंघन पूर्वाग्रह माना जाएगा, लेकिन जहां नियम निदेशात्मक मात्र है, वास्तविक पूर्वाग्रह के तत्व का निवेदन कर और प्रकट किये जाने की आवश्यकता है। इन नियमों में कठोरता विधि के विकास के साथ काफी हद तक शिथिल हो गयी है। वास्तविक पूर्वाग्रह के इस दृष्टांत को एक आवश्यक विशेषता के रूप में स्वीकार किया गया है जहां निदेशात्मक नियमों का उल्लंघन या प्राकृतिक न्याय का उल्लंघन हुआ है क्योंकि सामान्य बोलचाल में समझा जाता है। जैसे किसी विभागीय जांच में जहां विभाग बड़ी संख्या में दस्तावेजों पर अवलम्बित है, जिनमें से अधिकांश दस्तावेज दोषी अधिकारी को प्रदान कर उसे अपना बचाव करने का अवसर दिया जाता है, सिवाय इसके कि औपचारिक दस्तावेजों की कुछ प्रतियां दोषी अधिकारी को प्रस्तुत नहीं की गई थीं। उस घटना में यह दर्शित करने की भार कर्मचारी पर है कि इन औपचारिक दस्तावेजों को प्रस्तुत न करने के परिणामस्वरूप वास्तव में पूर्वाग्रह कारित हुआ है और इसके परिणामस्वरूप उसे नुकसान उठाना पड़ा है।

xxx xxx xxx

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

87. ई.सी.आई.एल. बनाम बी करुणाकर [(1993) 4 एस.सी.सी. 727] के मामले में इस न्यायालय ने मौजूदा विधि पर ध्यान आकर्षित कर कहा कि युक्तियुक्त अवसर का सिद्धांत और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत को विधि के शासन को बनाए रखने और व्यक्ति को उसके उचित अधिकारों को सही ठहराने में सहायता करने के लिए विकसित किया गया है। इनको विभिन्न अवसरों पर न पढ़े जाने वाले मंत्र है और न ही किये जाने वाले कर्मकाण्ड़ हैं। वास्तव में रिपोर्ट के न देने से कर्मचारी को पूर्वाग्रह कारित हुआ है अथवा नहीं इसकों प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचारित किया जाना चाहिए। न्यायालय ने उस स्थिति को भी स्पष्ट किया है जिस स्थिति पर इन कारणों से विभागीय कार्यवाही को उलट दिया जाना चाहिए।

88. हरियाणा फाइनेंशियल कॉर्पोरेशन बनाम कैलाश चंद्र आहूजा [(2008) 9 एस.सी.सी. 31] के मामले में पारित इस न्यायालय के निर्णय का उल्लेख करना उपयोगी होगा, जहां न्यायालय ने धारित किया: (एस.सी.सी. प्रस्तर 21)

21. बी. करुणाकर में निर्धारित अनुपात से पूर्णरूपेण स्पष्ट है कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत के तहत जांच अधिकारी की रिपोर्ट की एक प्रति दोषी अधिकारी को दिया जाना अपेक्षित है, यदि ऐसा जांच अधिकारी अनुशासनात्मक प्राधिकरण से भिन्न है। यह भी स्पष्ट है कि जांच अधिकारी की रिपोर्ट का न दिया जाना प्राकृतिक न्याय के सिद्धान्त का उल्लंघन है। लेकिन समान रूप से स्पष्ट करता है कि जांच अधिकारी की रिपोर्ट को दोषी कर्मचारी को न दिया जाना स्वयमेव उस कार्यवाही को शून्य और निष्प्रभावी घोषित कर देगा और दण्ड़ादेश नॉन एस्ट और अप्रभावी होगा। दोषी कर्मचारी निवेदन कर सबित करे कि इस तरह की रिपोर्ट के नहीं दिये जाने से पूर्वाग्रह कारित हुआ था पैदा हो गया था और परिणामस्वरूप न्याय विफल हो गया था। यदि वह उस बिंदु पर न्यायालय को संतुष्ट करने में असमर्थ है, तो दण्ड़ादेश स्वतः अपास्त नहीं किया जा सकता है।"

89. सेवा में भेदभाव को नियंत्रित करने वाले सुस्थापित प्रतिमानों को पूर्वाग्रह के तत्व के साथ इन मामलों तक विस्तृत किया जा सकता है। तथ्यतः पूर्वाग्रह मात्र आशंका या युक्तियुक्त संदेह पर भी आधारित नहीं होना चाहिए। यह महत्वपूर्ण है कि पूर्वाग्रह का तत्व

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

तथ्य के रूप में मौजूद होना चाहिए या ऐसे व्यतिक्रम से उत्पन्न होने वाले पूर्वाग्रह कारित होने की निश्चित संभावना होना चाहिए। पूर्वाग्रह कारित होने की आशंका आधार पर इनमें से कोई भी विभागीय जांच को अपास्त करने की अनुमति नहीं होगी।"

38. न्यायालय ने व्यापक दृष्टिकोण लेकर निरर्थक आदेश पारित नहीं किया क्योंकि यह मामला स्वीकृत तथ्यों पर आधारित है, जो विबंध, अधिग्रहण, गैर–चुनौती या गैर–इनकार के कारण स्वीकृत है, इस न्यायालय द्वारा पारित निर्णय इस मामले के तथ्यों पर स्थापित सुने जाने के अधिकार के उल्लंघन के सभी उदाहरण हैं, किन्तु उस व्यक्ति को कोई पूर्वाग्रह कारित नहीं हुआ है जिसने प्राकृतिक न्याय के उल्लंगन का आरोप लगाया है क्योंकि वह ऐसा मामला था जो स्वीकृत तथ्यों पर आधारित थाः

(i) पंजाब एंड सिंध बैंक और अन्य बनाम सकत्तर सिंह (2001) 1 एस.सी.सी. 214 (देखेंः प्रस्तर 1,4 और 5);
(ii) कर्नाटक एस.आर.टी.सी. और अन्य बनाम एस.जी. कोट्टूरप्पा और अन्य (2005) 3 एस.सी.सी. 409 (देखेंः प्रस्तर 24);

48 (iii) विवेका नंद सेठी बनाम अध्यक्ष, जम्मू और कश्मीर बैंक लिमिटेड और अन्य (2005) 5 एस.सी.सी. 337 (देखेंः प्रस्तर 21,22 और 26);

(iv) मोहम्मद सरताज और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य (2006) 2 एस.सी.सी. 315 (देखें: प्रस्तर 18);

(v) पंजाब नेशनल बैंक और अन्य बनाम मनजीत सिंह और अन्य (2006) 8 एस.सी.सी. 647 (देखेंः प्रस्तर 17 और 19) ;

(vi) अशोक कुमार सोनकर बनाम भारत संघ और अन्य (2007) 4 एस.सी.सी. 54 (देखेंः प्रस्तर 26–32);

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

(vii) मणिपुर राज्य और अन्य बनाम वाई. टोकन सिंह और अन्य (2007) 5 एस.सी.सी. 65 (देखें: प्रस्तर 21 और 22);

(viii) सचिव, ए.पी. समाज कल्याण आवासीय शैक्षणिक संस्थान बनाम पिंडीगा श्रीधर और अन्य (2007) 13 एस.सी.सी. 352 (देखें: प्रस्तर 7);

(ix) पीठानी सूर्यनारायण और अन्य बनाम रेपका वेंकट रमण किशोर और अन्य (2009) 11 एस.सी.सी. 308 (देखें: प्रस्तर 18);

(x) नगरपालिका समिति, होशियापुर बनाम पंजाब राज्य विद्युत बोर्ड और अन्य (2010) 13 एस.सी.सी. 216 (देखें: 31 –36, 44 और 45);

(xi) भारत संघ और अन्य बनाम रघुवर पाल सिंह (2018) 15 एस.सी.सी. 463 (देखें: प्रस्तर 20)

39. इस प्रकार पूर्वोक्त निर्णयों का विश्लेषण निम्नलिखित को प्रकट करता है: (1) प्राकृतिक न्याय न्यायपालिका के हाथों में एक लचीला उपकरण है जो अन्याय को दूर करने के लिए युक्तियुक्त मामलों तक पहुंच सकता है। सुने जाने के अधिकार के नियम का उल्लंघन से स्वतः यह निष्कर्ष नहीं निकलता कि तद्द्वारा पूर्वाग्रह कारित हुआ है। जहां विधि के प्रक्रियात्मक और/या मौलिक प्रावधान प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों को समाविष्ट करते हैं वहां उनके उल्लंघन से पारित किये गये आदेश अपने आप अमान्य नहीं हो जाते हैं। यहां पुनः, वादी को पूर्वाग्रह कारित होना चाहिए सिवाय उन मामलों के जो विधि के आज्ञापक प्रावधान हैं जिनकी कल्पना व्यक्तिगत हित में ही नहीं बल्कि लोकहित में भी किया गया है ।

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

(3) प्राकृतिक न्याय के उल्लंघन की शिकायत करने वाले व्यक्ति को कोई पूर्वाग्रह नहीं होता है, जहां ऐसा व्यक्ति अपने अथवा इसके विरूद्ध मामले का प्रतिवाद नहीं करता है। ऐसा विबंध, अधिग्रहण, अधित्यजन और चुनौती न देना या तथ्यों की स्वीकृति अथवा अस्वीकृति के माध्यम से उन मामलों में हो सकता है जहां न्यायालय तथ्यों के आधार पर पाता है कि उस व्यक्ति को कोई वास्तविक पूर्वाग्रह कारित हुआ नहीं कहा जा सकता है जिस व्यक्ति ने प्राकृतिक न्याय के भंग की शिकायत किया है।

(4) ऐसे मामलों में जहां तथ्यों को स्वीकृत या निर्विवाद कहा जा सकता है, और केवल एकमात्र निष्कर्ष संभव है, तब न्यायालय अपास्त और प्रतिप्रेषण का निरर्थक आदेश पारित नहीं करता है, जब वास्तव में, कोई पूर्वाग्रह कारित नहीं होता है। यह निष्कर्ष न्यायालय द्वारा किसी मामले का तथ्यों के मूल्यांकन कर निकाला जाना चाहिए, न कि उस प्राधिकारी द्वारा जो किसी व्यक्ति के प्रति प्राकृतिक न्याय का उल्लंघन करता है।

(5) "पूर्वाग्रह" के अपवाद को मात्र आशंका या किसी वादी के युक्तियुक्त संदेह से अधिक होना चाहिए। इसे मामले के तथ्य पर या प्राकृतिक न्याय के अपालन कारित पूर्वाग्रह की संभावना पर आधारित होना चाहिए।

40. इन परीक्षणों के मानदण्ड़ो से न्याय करने पर यह स्पष्ट है कि जहां तक उसके पक्ष में निविदा के रद्द करने का संबंध है तो सुने जाने के अधिकार का पूरी तरह से उल्लंघन कर प्रत्यर्थी–1 पूरी तरह से अंधेरे में रखा गया है । जैसा कि श्री राकेश द्विवेदी द्वारा सही ढंग से तर्क दिया गया है, वास्तव में उनके मुवक्किल के लिए पूर्वाग्रह पैदा हो गया है, न केवल इस तथ्य से कि अनुबंध की अवधि का एक वर्ष दूर ले जाया गया है, बल्कि यह भी कि, यदि उच्च न्यायालय के फैसले को लागू किया जाना है आज एक तरफ, उनके मुवक्किल को तीन साल की अवधि के लिए निगम के किसी भी निविदा के लिए बोली लगाने से रोक दिया जाएगा। इस बात पर कोई संदेह नहीं है कि प्रथम दृष्टया निविदा दिनांक 01.06.2018 के अनुसरण में जिन दरों पर संविदा किया गया हैं, वह दर उस से अधिक था जो उस डिवीजन में उसी कार्य के लिए पूर्व निविदा विज्ञापन दिनांकित 01.04.2018 तहत जारी किया गया है। । श्री द्विवेदी का कथन है कि पड़ोसी क्षेत्रों में निविदा दरें भी अधिक थीं, और इन निविदाओं को रद्द करने के लिए अभी तक कुछ भी

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

नहीं किया गया है और इससे होने वाली वित्तीय हानि में वजन है। निगम खुद को हुए बड़े वित्तीय नुकसान के लिए उन व्यक्तियों के विरूद्ध जांच कर उपचारात्मक कार्यवाही करे जो इसके जिम्मेदार हैं। 41. इसलिए, हम इस आधार पर उच्च न्यायालय के आक्षेपित निर्णय को बरकरार रखते हैं कि वर्तमान मामले में तथ्यों के आधार पर प्राकृतिक न्याय का सचमुच उल्लंघन किया गया है, यह स्वीकृत तथ्यों का ऐसा मामला नहीं है जिससे निरर्थक रिट याचिका प्रदान कर दी जाए, और यह पक्षपात वास्तव में प्रत्यर्थी–1 को पूर्वाग्रह कारित हुआ है। उक्त निष्कर्ष के दृष्टिगत पक्षकारों ने जिन अन्य तर्कों को उटाया
है उसकी जांच करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

42. हम श्री द्विवेदी की कथनों को दोहराते हैं क्योंकि उनका मुवक्किल अन्य उत्तरवर्ती निविदा के तहत निगम के लिए काम कर रहा है, वह निविदा रद्द होने की बाद अवधि में होने वाले क्षतिपूर्ति का दावा नहीं करने जा रहा है। यह उसी के जैसा मामला है इसलिए उनके मुवक्किल द्वारा जमा बयाना राशि और सुरक्षा जमा को आज से आठ सप्ताह की अवधि के भीतर निगम द्वारा वापस करने का आदेश दिया जाता है। श्री द्विवेदी का मुवक्किल निगम से उसको भुगतान नहीं किये गये किसी भी राशि की मांग कर सकता है जिसके लिए उसने वास्तव में कार्य किया है और उसकी इस मांग पर निगम सुनवाई करने के उपरान्त कारण सहित या तो स्वीकार करेगा या खारिज कर देगा।

43. विशेष अनुमति याचिका (सिविल) 5136 वर्ष 2020 और विशेष अनुमति याचिका (सिविल) 7351 वर्ष 2020 से उद्भूत अपीलों को इस प्रकार आंशिक रूप से अनुमति प्रदान किया जाता है, और इलाहाबाद उच्च न्यायालय के आक्षेपित दिनांकित 11.12.2019 को केवल हमारे द्वारा इंगित सीमा तक अपास्त किया जाता है।

44. जहां तक विशेष अनुमति याचिका (सिविल) 7364 वर्ष 2020 से उद्भूत अपील का प्रश्न है, तो उसमें तथ्य हमारे सामने अन्य दो जुड़े हुए अपीलों से केवल इस सीमा तक अलग हैं कि प्रत्यर्थी–1 उसमें, मेसर्स धरम राज सिंह, तेंदू (सोनभद्र) क्षेत्र के लिए सफल बोलीदाता थे, जिसकी निविदा निगम के आदेश दिनांकित 26.07.2019 द्वारा खारिज

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

कर दिया गया था। उच्च न्यायालय इलाहाबाद (लखनऊ बेंच) के इस अपील दिनांकित 07.01.2020 में पारित निर्णय मेसर्स धरम राज सिंह की रद्द करने के आदेश को चुनौती देने वाली रिट याचिका को यह कहकर अनुज्ञात कर दिया कि इसको उच्च न्यायालय, इलाहाबाद द्वारा पारित निर्णय दिनांकित 11.12.2019 द्वारा शासित होना था। परिणामस्वरूप दोनों खारिज अपीलों में हमारा निर्णय , और प्रदत्त सभी आनुषांगित उपचार, इन सभी चारों अपीलों में भी लागू होगें।

45. इन टिप्पणियों के साथ इन अपीलों का निपटारा किया जाता है।

.....

न्यायमूर्ति आर. एफ. नरीमन

.....

न्यायमूर्ति नवीन सिन्हा

.....

न्यायमूर्ति के.एम. जोसेफ

नई दिल्ली;

16 अक्टूबर 2020

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और कियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।